परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

✲ जन्मदिवस 19–03–1971 ✲ मुनिदीक्षा–11–05–1989 ✲ आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणा:–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

पार्श्वपुराण

ग्रन्थकर्त्ता
महाकविश्री भूधरदास जी

प्रकाशक
आचार्य शिवसागर दिगम्बर जैन ग्रन्थमाला
शान्तिवीरनगर, महावीरजी (राजस्थान)

(परम्परानायक)

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पदविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्राय: होता है। फलत: उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तृत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

॥ नमः श्रीपार्श्वनाथाय ॥

स्वर्गीय कविवर भूधरदास विरचित

पार्श्व पुराण

(जैन सिद्धान्त गर्भित सुन्दर काव्य ग्रंथ)

प्रकाशक—

आचार्य शिवसागर दि० जैन ग्रंथमाला

शान्तिवीर नगर

श्री महावीरजी (राजस्थान)

१००० प्रतियां

गुरु पूर्णिमा

वि० सं० २०३०

प्रकाशकीय

कवि भूधरदासजी का पार्श्व पुराण वर्तमान में उपलब्ध नहीं है। इसकी काफी मांग है। कवि ने इस काव्य में भगवान पार्श्वनाथ के जीवन चरित्र के साथ साथ जैन सिद्धान्त की बहुतसी चर्चाएं इसमें लिखी है—जो सर्व साधारण के लिए बड़ी उपयोगी हैं। जब इस काव्य के छपाने की चर्चा आई तो आचार्य श्री १०८ श्री शांतिसागरजी महाराज के संघ के संघपति श्री सेठ पूनमचंदजी घासीलालजी के सुपुत्र सेठ श्री मोतीलालजी (वर्तमान मुनि १०८ श्री सुबुद्धिसागरजी महाराज) के सुपुत्र श्री राजमलजी एवं उनके परिवार ने इस ग्रंथ के मुद्रण का सारा भार वहन करने की स्वीकारता प्रदान की और जल्दी ही छपाने की प्रेरणा दी। तदनुसार यह ग्रंथ छपकर पाठकों के हाथों में दिया जारहा है। इस आर्थिक सहयोग के लिए आचार्य शिवसागर ग्रंथ माला की ओर से श्री राजमलजी एवं उनके परिवार को हार्दिक धन्यवाद है। आशा है पाठक इस काव्य-ग्रंथ का पठन-मनन कर आत्म-लाभ करेंगे।

ब्र० लाडमल

गुरु पूर्णिमा — अधिष्ठाता-श्री शांतिवीर दि० जैन संस्थान

सं० २०३० — शांतिवीर नगर, श्री महावीरजी (राज.)

कविवर भूधरदासजी

इस पार्श्वपुराण के रचयिता कविवर भूधरदासजी हैं। अठारहवीं शती के उत्तरार्द्ध में कविवर ने आगरा में इसकी रचना की। कवि आगरा के रहने वाले खंडेलवाल दि० जैन थे। इनका समय विक्रम सं० १७५० से १८०६ माना जाता है। पार्श्वपुराण की रचना से पूर्व आध्यात्मिक एवं उपदेशी एकसौ से अधिक छन्द उनने लिखे, जिन्हें जयपुर नरेश सवाई जयसिंहजी के सूबेदार (सूबा के हाकिम) श्री गुलाबचंदजी के कहने से एकत्र कर पौष कृष्णा त्रयोदशी रविवार वि० सं० १७८१ में पूर्ण किया। शतक में १०६ छन्द हैं। अन्तिम छन्द में अपना परिचय देते हुए उनने लिखा है—

आगरे में बाल-बुद्धि भूधर खंडेलवाल, बालक के ख्याल सौं कवित्त कर जानै है
ऐसे ही करत भयो जैसिंह सवाई सूबा-हाकिम गुलाबचंद आये तिहि थानै है।
हरीसिंह साह के सुवंश-धर्मरागी नर, तिनके कहे सौं जोरि कीनी एक ठानै है।
फिरि फिरि प्रेरे मेरे आलस को अंतभयो, उनकी सहाय यह मेरो मन मानै है।

दोहा—सतरह सै इक्यासिया, पोह पाख तमलीन।
तिथि तेरस रविवार को, सतक समापत कीन।

शतक के पश्चात् पार्श्वपुराण की रचना हुई जो आषाढ़ शुक्ला पंचमी वि सं १७८९ में पूर्ण हुई। इन दो ग्रंथों के अतिरिक्त कवि के बनाये लगभग ७० पद भी उपलब्ध हैं जो विभिन्न राग रागनियों में गाये जा सकते हैं। खोज करने पर संभवतः और भी पद मिलें। पर जितने उपलब्ध हैं वे बडे ही महत्वपूर्ण और हृदय को छूनेवाले हैं। कवि के पद, छन्द आदि एक से एक बढ़कर हैं और सांसारिक प्राणी को झकझोर देने वाले हैं। संसार की असारता, भोगों की निःसारता और मानव जीवन की उपादेयता पर कवि ने खूब ही लिखा है। इतने प्रभावक हैं शतक के छन्द एवं भजन कि जो कार्य लम्बे चौडे अनेक उपदेशों और शास्त्रों के अध्ययन से नहीं हो सकता–वह पद्य की दो लाइनों से हो जाता है। बड़ा आनन्द आता है इनके पढने मात्र से ही।

पार्श्वपुराण में भी कवि ने कमाल कर दिया है। सचमुच पार्श्व पुराण जैन काव्य-साहित्य में एक उच्च कोटिका काव्य-ग्रंथ है। इसमें भगवान पार्श्वनाथ का जीवन चरित्र है-पर साथ ही जैन सिद्धान्त का सार भी इसमें कवि ने भर दिया है। पंच कल्याणक वर्णन के साथ तत्त्वचर्चा और आध्यात्मिक उपदेशों से सराबोर है-यह ग्रंथ। शब्द विन्यास, भावगांभीर्य और प्रसादादिगुण स्थान स्थान पर देखने को मिलते हैं इस छोटे से पुराण में। विभिन्न छन्दों में निबद्ध यह ग्रंथ कवि की छन्द-शास्त्र की जानकारी प्रकट करता है। यद्यपि कवि ने अपनी लघुता प्रकट करते हुए लिखा है कि—

अमर कोष नहि पढ्यो, मैं न कहि पिंगल पेख्यो।
काव्य कंठ नहि करो, सारसुत सो नहि सीख्यो।
अच्छर-संधि-समास-ज्ञान वर्जित बुधि हीनी।
धर्म-भावना हेत-किमपि भाषा यह कीनी।

किन्तु वे एक विद्वान् थे—साहित्य, दर्शन और सिद्धान्त के अच्छे जानकार। यह पार्श्वपुराण किसी का अनुवाद नहीं यह कवि की एक स्वतंत्र मौलिक रचना है। जैन काव्यों में ऐसा अन्य कोई चरित्र ग्रंथ नहीं है। कवि का प्रभाव इसीसे स्पष्ट है कि उनका पार्श्वपुराण, जैन शतक एवं पद संग्रह का समाज में काफी प्रचार है और बड़े चाव से लोग इन्हें पढ़ते हैं। इसीलिए इनकी रचनाओं के बार २ प्रकाशन की आवश्यकता पड जाती है। प्रस्तुत संस्करण भी ग्रंथ उपलब्ध नहीं होने से छपाया गया है। उनके भजन तो सैंकडों प्रकाशनों में मिलेंगे। कोई भजन संग्रह इनके पद बिना अधूरा ही समझा जावेगा।

अब तक के प्रकाशित पार्श्वपुराणों के संस्करणों में यह संस्करण विशेष महत्व रखता है। इसमें कठिन शब्दों के अर्थ भी दिये गये हैं-यद्यपि सर्व साधारण को समझने के लिए और भी शब्दार्थ अपेक्षित हैं फिर भी जितने दिये हैं-वे भी बडे उपयोगी हैं। इस शब्दार्थ का कार्य जयपुर के विद्वान् श्री गुलाबचंदजी जैन दर्शनाचार्य, एम.ए. ने किया है।

भँवरलाल न्यायतीर्थ

शुद्धि–पत्रक

प्रस्तुत पार्श्वपुराण में प्रारंभ के १६ पृष्ठों के शब्दार्थ नहीं छप सके हैं। अत: निम्न प्रकार पाठ शुद्धि करके शब्दार्थ यथास्थान पढने का कष्ट करें।

शुद्धाशुद्धि

पृष्ठ संख्या	पंक्ति संख्या	अशुद्ध	शुद्ध
१	१५	।।१।।	।।३।।
२	२	।।१।।	।।४।।
१२	२२	भूताचलपर्व	भूताचलपर्वत
२७	२१	शास्त्र भंडार	शस्त्र भंडार
२८	२०	द्रोणाचार्य जैसे	चारसौ (या संख्या विशेष) ग्रामों मेंप्रधान

पृष्ठों के अनुसार शब्दार्थ निम्न प्रकार हैं—

पृष्ठ १. भुवनतिलक=तीनलोक में महान, दिवायर=सूर्य, गुणसायर=गुणों के समुद्र, नाग=हाथी, मयमंत=मतवाला, उच्छेदन=उखाड़नेवाले, रमाकंत=अनंत चतुष्टय रूप लक्ष्मी के पति, बोध=ज्ञान, मार=कामदेव, मातंग=हाथी, मृगेसर=सिंह, मुखमयंक=मुखरूपी चन्द्रमा, रंक=गरीब, रजनीपति=चन्द्रमा, पन्नग=सांप।

पृष्ठ २. शक्र=इन्द्र, चक्र=चक्रवर्ती, भवजलधि=संसार–समुद्र, तरड=नाव, विषधर=सांप, डंकै=काटे, व्याल=सांप, नेरै=नजदीक, बादि=व्यर्थ, उर-कोष=हृदय रूपी खजाना, रंक-धन=गरीब के धन के समान, हेठ=हीन, विगतविरोध=विरोध को दूर करनेवाला।

ॐ

— कविवर भूधरदासजी विरचित —

पार्श्व-पुराण

श्रीपार्श्वनाथजी की स्तुति।

दोहा।

मोह-महा-तम-दलन दिन, तपलक्ष्मी भरतार।
ते पारस परमेस मुझ, होहु सुमतिदातार ॥ १ ॥
वामानंदन-कलपतरु, जयो जगत-हितकार।
मुनिजन जाको आस करि, जाचें सिवफल सार ॥२॥

छप्पय।

भुवनतिलक भगवंत, संतजन-कमल-दिवायर।
जगतजंतु-बन्धव अनंत, अनुपम गुणसायर ॥
राग-नाग-मयमंत,-दंत-उच्छेपन बलि अति।
रमाकंत अरहंत, अतुल जसवन्त जगतपति ॥
महिमा महंत मुनिजन जपत, आदि अंत सबको सरन।
सो परमदेव मुझ मन बसो, पासनाह मंगलकरन ॥१॥
विमल-बोध-दातार, विश्व-विद्या-परमेसर।
लछमीकमलकुमार, मार-मातंग-मृगेसर ॥
मुखमयंक अवलोकि, रंक रजनीपति लाजे।
नाम-मंत्र-परताप, पाप पन्नग डरि भाजे ॥

जय अश्वसेन-कुल-चन्द्र जिन, सक्र-चक्र-पूजित-चरन ।
तारो अपार भव-जलधितैं, तुम तरंड तारन तरन ।।१।।

बाघ सिंह बस होंहि, विषम विषधर नहिं डंकै ।
भूत प्रेत बेताल, ब्याल बैरी मन संकै ।।
साकिनि डाकिनि अगनि, चोर नहिं भय उपजावै ।
रोग सोग सब जांहि, विपत नेरे नहिं आवै ।।
श्रीपार्सदेवके पदकमल, हिये धरत निज एकमन ।
छूटैं अनादि बंधन बंधे, कौन कथा विनसैं विघन ।।५।।
चहुंगति भ्रमत अनादि, वादि बहुकाल गमायो ।
रही सदा सुख-आस, प्यास, जल कहूं न पायो ।।
सुख-करता जिनराज, आज लौं हिये न आये ।
अब मुझ माथे भाग, चरन-चिंतामनि पाये ।।
राखौं संभाल उर कोषमैं, नहिं बिसरौं पल रंक-धन ।
परमावचोर टालन निमित, करौं पार्सजिनगुनकथन ।।

चौपई [१५ मात्रा]

बन्दौं तीर्थंकर चौबीस । बन्दौं सिद्ध बसैं जगसीस ।
बन्दौं आचारज उवझाय । बन्दौं परम साधु के पाय ।७।
ये ही पद पांचों परमेठ । ये ही सांच और सब हेठ ।
ये ही मंगल पूज्य अतीव । ये ही उत्तम सरन सदीव ।८।
वंदौं जिनबानी मन सोध । आदि अंत जो विगत-विरोध ।
सकलवस्तु दरसावनहार । भ्रमविषहरन ओषधी सार ।९।

दोहा ।

बरतो जग जयवंत नित, जिनप्रवचन अमलान ।
लोक-महलमें जगमगै, मानिक-दीप समान ।।१०।।
हरो भरम दारिद्र दुख, भरो हमारी आस ।
करो सारदा लच्छमी, मुझ उर अंबुज बास ।।११।।

चौपई ।

बन्दौं वृषभसेन गनराज । गुरु गौतम भवजलधिजहाज ।
कुंदकुंद-मुनि-प्रमुख सुपंथ । जे सब आचारज निरग्रंथ ।१२।
अंनतत्त्व के जाननहार । भये जथारथ कथक उदार ।
तिनके चरनकमल कर जोरि । करौं प्रनाम मान-मद-छोरि ।।

दोहा ।

सकल पूज्य-पद पूजकै, अलपबुद्धि अनुसार ।
भाषा पार्सपुरान की, करौं स्वपरहितकार ।।१४।।

चौपई

जिनगुनकथन अगमविस्तार । बुधिबल कौन लहै कवि पार ।
जिनसेनादिक सूरि महंत । बरनन करि पायो नहिं अंत ।१५।
तो अब अलपमति जन और । कौन गिनतिमें तिनकी दौर ।
जो बहुभार गयंद न बहै । सो क्यों दीन ससक निरवहै ।१६।

दोहा

कह जानें ते यों कहैं, हम कछु वरन्यो नाहिं ।
जे कह जानें ही नहीं, ते अब कहा कहाहिं ।।१७।।
नभ बिलस्त नापैं नहीं, चुलू न सागर तोय ।
श्रीजिनगुनसंख्या सुजस, त्यों कवि करै न कोय ।।१८।।

चौपई

पै यह उत्तम नर अवतार। जिनचरचा बिन अफल असार।
सुनि पुरान जो घुमैं न सीस। सो थोथे नारेल सरीस।१९।
जिनचरित्र जे सुनें न कान। देहगेह के छिद्र समान।
जामुख जैनकथा नहिं होय। जीभ भुजंगनिको बिल सोय।२०।
या प्रकार यह उद्यम जोग। कहत पुरानन पंडित लोग।
जिनगुनगान सुधारसन्याय। सेवत अलप जनम-जुर-जाय।२१।

घनाक्षरी।

जौ लौं कवि काव्यहेत आगम के अच्छर कौ,
अरथ विचारैं तौलौं सिद्धि सुभ ध्यान की।
और वह पाठ जब भूपर प्रगट होय,
पढ़ैं सुनैं जीव तिन्हें प्रापति ह्वै ग्यानकी॥
ऐसें निज-परको विचार हित हेतु हम,
उद्यम कियौ है नहिं बान अभिमानकी।
ग्यानअंस चाखा भई ऐसी अभिलाखा अब,
करूं जोरि भाखा जिन पारसपुरानकी॥२२॥
आगैं जैन ग्रन्थनि के करता कवीन्द्र भये,
करी देवभासा महाबुद्धिफल लीनों है।
अच्छर-मिताई तथा अर्थ की गभीरताई,
पदललिताई जहां आई रीति तीनों है॥
काल के प्रभाव तिन ग्रन्थनिके पाठी अब,
दीसत अलप ऐसो, आयो दिन हीनों है।

तातैं इह समै जोग पढ़ै बालबुद्धि लोग ।
पारसपुरानपाठ भाषाबद्ध कीनों है ॥२३॥

दोहा ।

सक्तिभक्तिबल कविनपै, जिनगुन बरनैं जाहि ॥
मैं अब बरनौं भक्तिवस, सक्ति मूल मुझ नाहि ॥२४॥
बरनौं पूरवकथितक्रम, ग्रंथअर्थ अवधारि ।
सुगमरूप संछेपसौं, सुनौ सबहि नरनारि ॥२५॥

चौपई ।

मगधदेस देसनि-परधान । राजगृही नगरी सुभथान ॥
राज करै श्रेनिक भूपाल । नीतवंत नृप पुन्यविसाल ॥२६॥
छायक-सम्यकदरसनसार । रूप सील सबगुनआधार ॥
तिनके घर अंतेवर घना । पटरानी रानी चेलना ॥२७॥
जाके गुन बरनत बहु भाय । बिरिया लगै कथा बढ़ि जाय ॥
एक दिना निज सभा नरेस । निवसै जैसे सुरग-सुरेस ॥२८॥
रोमाञ्चित बनपालक ताम । आय राय प्रति कियौ प्रनाम ॥
छह रितुके फल फूल अनूप । आगै धरे अनूपम रूप ॥२९॥
हाथ जोरि बिनवै बनपाल । विपुलाचल पर्वत के भाल ॥
बर्द्धमान तीर्थंकर आप । आये राजन-पुन्यप्रताप ॥३०॥
महिमा कछु बरनी नहिं जाय । इंद्रादिक सेवैं सब पाय ॥
समोसरनसंपतिकी कथा । मोपै कही जाय किमि तथा ॥३१॥
माली वचन सुनें सुखदाय । हरख्यो राजा अंग न माय ॥
दीनें भूषन वसन उतार । बनमाली लीनें सिरधार ॥३२॥

सात पेंड़ गिरिसम्मुख जाय । कियौ परोच्छ विनय नरराय ।।
ग्रानंदभेरि नगरमैं दई । सबहीकौं दरसनरुचि भई ।।३३।।
चल्यो संग पुरजन समुदाय । बंदे वर्द्धमान जिनराय ।।
लोकोत्तर लछमी अवलोक । गये सकल भूपतिके सोक ।।३४।।
थुति आरंभ करी बहुभाय । बार बार भुवि सीस नवाय ।।
गोतम गुरु पूजे कर जोरि । नरकोठं बैठ्यौ मद छोरि ।।३५।।
कियौ प्रश्न श्रेणिक बड़ भूप । प्रभु पारस निजकथा अनूप।।
जाके सुनत पाप छय होय । कहिये देव कृपाकरि सोय ।३६।
तब गनधर बोले हितकाज । जोग प्रस्न कीनों नरराज ।।
सुन पुनीत पारसजिनकथा । सफल होय मानुषभव जथा ।३७।

दोहा ।

इहि बिधि जो मगधेस प्रति, कह्यौ चरित गनराज ।।
ताही क्रम आये कहत, आचारज परकाज ।। ३८ ।।
तिनहीके अनुसार अब, कहूं किमपि विस्तार ।।
जैनकथा कलपित नहीं, यह जानो निरधार ।। ३९ ।।
जैनवचनवारिधि अगम, पानो अर्थ अनूप ।।
मतिभाजन भर भर लिये, यह जिनआगमरूप ।। ४० ।।

इति पीठिका ।

पहला अधिकार

चौपई।

जंबूदीप दिपै इह सार। सूरज मंडल की उनहार ॥
मध्य सुमेरुकरिणकाभास। बने छेत्र दल दीरघ जास ॥४१॥
तारागन मकरंद मनोग। सुरनरसंग भ्रमरकुलजोग ॥
लवनसमुद्र सरोवरथान। दीप किधौं यह कमल महान॥४२॥
लच्छ महा जोजन विस्तार। बसै विविध-रचना-आधार ॥
दच्छिन भरत धनुष-संठान। पर्वत फरणच नदीजुग बान ॥४३॥
मानों सागरप्रति अनुमानि। तानत तीर छार-जल जानि ॥
ऐसी भांति विराजत खेत। छहों-खंड-मंडित छबि देत ॥४४॥
पांच मलेच्छ बसैं तामांहि। धर्म कर्म कछु जानैं नांहि ॥
उत्तम आरजखंडमझार। देस सुरम्य बसै मनहार ॥४५॥
जनकुल जहां रहैं बहु भांति। पास पास सोहैं पुर-पांति ॥
सरवर नदी सैल उद्यान। बन उपवनसौं सोभामान ॥४६॥
तहां नगर पोदनपुर नाम। मानों भूमितिलक अभिराम ॥
देवलोककी उपमा धरै। सब ही विध देखत मनहरै ॥४७॥

दोहा।

तुंग कोट खाई सजल, सघन बाग गृह-पांति ॥
चौपथ चौक बजारसौं, सोहै पुर बहुभांति ॥४८॥
ठाम ठाम गोपुर लसैं, वापी सरवर कूप ॥
किधौं स्वर्ग ने भूमिकौं, भेजी भेंट अनूप ॥४९॥

चौपई।

जैनी प्रजा जहां परवीन। बसै दानपूजाव्रतलीन।
जैनभवन ऊंचे अति बने। सिखर धुजासौं सोभित घने ॥५०॥
इहि विधि पुरसोभा अधिकार। बरनन करत लगै बहुबार।
राज करै राजा अरविंद। सोहै मानों स्वर्ग सुरिंद ॥५१॥
पालै प्रजा कुमति जिन दली। नीतिवेलमंडित भुजबली।
दयाधाम सज्जन गंभीर। गुनरागी त्यागी रनधीर ॥५२॥
तिस भूपतिकै विप्र सुजान। विस्वभूति मंत्री बुधिवान।
ताकै तिया अनूदरि सती। रूपसील-गुन-लच्छनवती ॥५३॥
दोय पुत्र तिनकै अवतरे। पापपुन्य की पटतर धरे।
जेठो नंदन कमठ कुपूत। दूजो पुत्र सुधी मरुभूत ॥५४॥

दोहा।

जेठो मतिहेठो कुटिल, लघुसुत सरल सुभाय।
विष अमृत उपजे जुगल, विप्र जलधिके जाय ॥ ५५ ॥
बड़े पुत्रने भारजा, व्याही बरुना नाम।
लघुने बरी विसुन्दरी, रूपवती अभिराम ॥ ५६ ॥

चौपई।

यों सुख निवसैं बांधव दोय। निज निज टेव न टारै कोय।
वक्र चाल विषधर नहिं तजै। हंस वक्रता भूल न भजै ॥५७॥

दोहा।

उपजे एकहि गर्भसौं, सज्जन दुर्जन येह।
लोह-कवच रच्छा करै, खांडो खंडै देह ॥५८॥

चौपई ।

अति सज्जन मरुभूति-कुमार । नीति-शास्त्रको जाननहार ।।
सबकों इष्ट सकलगुनगेह । राजा प्रजा करैं सब नेह ।।५९।
एक दिना भूपति-मंत्रीस । सेत बाल देख्यौ निज सीस ।।
उपज्यो विप्र-हियें वैराग । जान्यौ सब जग अथिर सुहाग ।।६०

दोहा ।

जरा मौतकी लघु बहिन, यामैं संसै नाहिं ।।
तौ भी सुहित न चितवैं, बड़ी भूल जगमाहिं ।।६१।।

चौपई ।

यह विचार मंत्री मनमाहिं । निज सुत सौंपि रायकी बांहि ।
सुगुरु-साखि जिन-चारित लियौ । वनोवास आतमहित कियौ ।
अब मरुभूति विप्र सुख करै । अहनिस नीतिपंथ पग धरै ।।
राजा प्रीति करै बहु भाय । सोमप्रकृति सबकों सुखदाय ।।६३
एक समय आपन अरविंद । मंत्री सेनासहित नरिंद ।।
राय वज्रवीरजपर चढ़े । क्रोधभाव उरमैं अति बढ़े ।।६।।
पीछे कमठ निरंकुश होय । लग्यौ अनीति करन सठ सोय ।।
जो मन आवै सो हठ गहै । 'मैं राजा' सबसौं इम कहै ।।६५
एक दिना निजभ्रातानारि । भूषन-भूषितरूप निहारि ।।
रागअंध अति विह्वल भयौ । तीच्छन कामताप उर तयौ ।।६६
महा मलिन उर बसै कुभाव । दुर्गतिगामी जीव सुभाव ।।
पुत्री सम लघुभ्रातानारि । तहां कुदिष्ट धरी अविचारि ।।६७

दोहा।

पाप कर्मको डर नहीं, नहीं लोककी लाज ॥
कामी जनकी रीति यह, धिक तिस जन्म अकाज ॥६८॥
कामी काज अकाजमैं, हो हैं अंध अवेव ॥
मदनमत्त मदमत्त सम, जरो जरो यह टेव ॥६९॥
पिता नीर परसै नहीं, दूर रहै रवि यार ॥
ता अंबुजमैं मूढ़ अलि, उरझि मरै अविचार ॥७०॥
त्यों ही कुविसनरत पुरुष, होय अवस अविवेक ॥
हितअनहित सोचै नहीं, हियै विसनकी टेक ॥७१॥

चौपई।

बनमैं सघन लतागृह जहां। गयौ कमठ कामातुर तहां ॥
बढ़ी वेदना कल नहि परैं। छिन छिन काम-विथा दुख करै ॥
कमठ सखा कलहंस बिसेख। पूछत भयौ दुखी तिह देख ॥
कौन व्याधि उपजी तुम अंग। अतिव्याकुल दीखत सरवंग ॥
तब तिन लाज छोरि सब सही। मनकी बात मित्रसौं कही ॥
सुनि कलहंस कथा बिपरीति। सिच्छावचन कहे करि प्रीति ॥
अति अजोग कारज इह बीर। सो तुम चित्यौ साहस-धीर ॥
परनारीसम पाप न आन। परभवदुख इह भव जस-हान ॥७५
इस ही बंछासौं अघ भरे। रावण आदि नरकमैं परे ॥
जगमैं जेठ पितासमतूल। बात कहत लाजै नहि भूल ॥७६॥
तातैं यह हठ भूल न करो। सुहित सीख मेरी मन धरो ॥
लोकनिंद कारज यह जान। धर्मनिंद निहचै उर आन ॥७७

दोहा।

यों कलहंस अनेक विध, दई सीख सुखदैन ॥
ते सब कमठकुसीलप्रति, भये विफल हितवैन ॥ ७८ ॥
आयुहीन नर को जथा, औषधि लगै न लेस ॥
त्यों ही रागी पुरुष प्रति, वृथा धरम-उपदेश ॥ ७९ ॥
बोल्यौ तब कामी कमठ, सुनो मित्र निरधार ॥
जो नहिं मिलै विसुंदरी, तो मुझ मरन विचार ॥ ८० ॥
देख कमठकी अधिक हठ, कुमति करी कलहंस ॥
जाय कहे ता नारिसौं, झूठ वचन अपसंस ॥ ८१ ॥

अडिल्ल छंद।

सुन विसुंदरी आज कमठ बनमैं दुखी।
तू ताकी सुध लेहु होय जिहि विधि सुखी ॥
सुनते ही सतभाव गई बनमैं तहाँ।
निवसै कर परपंच कमठ कपटी जहाँ ॥ ८२ ॥

दोहा।

छलबल कर भीतर लई, वनिता गई अजान।
राग वचन भाखे विविध, दुराचारकी खान ॥ ८३ ॥

चाल छंद।

गजमातो कमठ कलंकी। अघसौं मनसा नहिं संकी।
भावज वन-करनी रंजो। निज सीलतरोवर भंजो ॥ ८४ ॥
रिपु जीत विजयजस पायो। अरविंद नृपति घर आयो ॥
जे कर्म कमठने कीनें। राजा सब ते सुन लीने ॥ ८५ ॥

मंत्री मरुभूति बुलायो । ताकों सब भेद सुनायो ।।
कहु विप्र सुधी क्या कीजै । क्या दंड इसै अब दीजै ।।८६।।
दुज कहे सरल परिनामी । अपराध छिमा कर स्वामी ।।
जो एक दोष सुन लीजै । ताकों प्रभु दंड न दीजै ।। ८७ ।।
तब भूप कहै सुन भाई । जो निग्रहजोग अन्याई ।।
तातै करुना किम होहै । यह न्याय नृपति नहिं सोहै ।।८८।।
तातै गृह गच्छ सयाने । मत खेद हियै कछु आने ।।
ऐसै कह विप्र पठायो । तिस पीछै कमठ बुलायो ।।८९।।
अति निंदो नीच कुकर्मी । जानो निरधार अधर्मी ।।
राजा अति ही रिस कीनौं । सिर मुंड दंड बहु दीनौं ।।९०।।
मुखकै कालोंस लगाई । खर रोप्यौ पीर न आई ।।
फिर सारै नगर फिरायो । प्रति बीथी ढोल बजायौ ।।९१।।
इस भांति कमठकी ख्वारी । देखैं सब ही नरनारी ।।
पुरवासी लोक धिकारैं । बालक मिलि कंकर मारैं ।।९२।।
यों दंड दियो अति भारी । फिर दीनौं देश निकारी ।।
जो दीरघ पाप कमाये । ततकाल उदै बहु आये ।। ९३ ।।

दोहा ।

इहि विधि फूल्यो पाप तरु, देख्यो सब संसार ।।
आगे फल है नरक फल, धिक दुबिसन असार ।। ९४ ।।

चौपई ।

महादंड भूपति जब दयो । कमठ कुसील दुखी अति भयो ।।
बिलखत बदन गयो चल तहां । भूताचलपर्व है जहां ।।९५।।

रहै तहां तपसी-समुदाय। ग्यान बिना सब सोखैं काय ॥
केई रहे अधोमुख झूल। धूंआं पान करैं अघमूल ॥९६॥
केई ऊरधमुखी अघोर। देखैं सबैं गगनकी ओर ॥
केई निवसैं ऊरध बांहि। दुविध दयासौं परचैं नांहि ॥९७॥
केई पंच अगनि झल सहैं। केई सदा मौनमुख रहैं ॥
केई बैठे भसम चढाय। केई मृगछाला तन लाय ॥९८॥
नख बढ़ाय केई दुख भरैं। केई जटा—भार सिर धरैं ॥
यों अग्यान तपलीन मलीन। करैं खेद परमारथ हीन ॥९९
तिनमें एक तापसीनाथ। प्रनम्यौ ताहि धरे सिर हाथ ॥
तिन असीस दे आदर कियौ। दिच्छादान कमठ तहँ लियौ१०
करन लग्यौ तब कायकलेस। उर वैराग विवेक न लेस ॥
ठाढ़ो भयौ सिला कर लिये। किधौं फनी फन ऊँचो किये।१०
मंत्री बंधवकी सुधि पाय। राजासौं बिनयो इमि आय ॥
भूताचलपर्वतकी ओर। भ्राता कमठ करै तप घोर ॥१०२
जो नरनायक आग्या होय। देखूं जाय सहोदर सोय ॥
पूछै नृपति कौन तप करै। भो प्रभु तापसके व्रत धरै॥१०३
एक बार मिलि आऊं ताहि। राय कहै मंत्री मत जाहि ॥
खलसौं मिलैं कहा सुख होय। विषधर भेंटे लाभ न कोय ॥१०
बरजौ रह्यो न बारंबार। महा सरलचित विप्रकुमार ॥
भ्रातमोहबस उद्यम कियौ। कोमल होत सुजनको हियौ।१०

दोहा

दुर्जनदूखित संतकौ, सरल सुभाव न जाय।
दर्पणकी छवि छारसौं, अधिकहि उज्ज्वल थाय ॥१०६॥

सज्जन टरं न टेवसौं, जो दुर्जन दुख देय ।
चंदन कटत कुठारमुख, अवसि सुवास करेय ।।१०७।।

चौपाई

गयो विप्र एकाकी तहाँ । कमठ कठोर करै तप जहाँ ।।
विनयवंत हो विनयो तास । महा सरलवायक सुख भास ।।
भो बंधव तो उर गंभोर । यह अपराध छिमा कर बोर ।।
मैं तो राय बहुत बीनयो । मानी नाहि तुमैं दुख दयो ।१०९।
होनहारसौं कहा वसाय । तुम बिन मोहि कछू न सुहाय ।।
यों कह पांवन लाग्यौ जाम । कोप्यौ अधिक कमठ दुठ ताम ।।

दोहा ।

दुर्जन और सलेखमा, ये समान जग माहि ।
ज्यों ज्यों मधुरो दीजिये, त्यों त्यों कोप कराहि ।।१११।।
सिला सहोदर सीसपै, डारी वज्र समान ।
पीर न आई पिसुनकौं, धिक दुर्जन की बान ।।११२।।
दुर्जन को विस्वास जे, करि हैं नर अविचार ।
ते मंत्री मरुभूमि सम, दुख पावैं निरधार ।।११२।।
दुर्जन जनकी प्रीतसौं, कहो कैसे सुख होय ।
विषधर पोषि पियूषकी, प्रापति सुनी न लोय ।।११४।।
मंत्री तनतैं रुधिरकी, उछली छींट कराल ।
दुर्जनहिततरुतैं किधौं, निकसो कोंपल लाल ।।११५।।
इहिविधि पापी कमठने, हत्या करी महान ।
तब तपसी मिलि नीच नर, काढ दियो दुठ जान ।।११६।।

चौपई ।

फेरि दुष्ट भीलनतें मिल्यो । भयो चोर घर मूसन हिल्यौ ।।
पाप करत कर आयो जबै । बांधि बुरी विधि मार्यो तबै ।।

दोहा ।

जैसी करनी आचरै, तैसो ही फल होय ।
इन्द्रायनकी बेलिकै, आंब न लागै कोय ।।११८।।

चौपई ।

एक दिना अरविंद नरिंद । पूंछै कर जुग जोरि मुनिंद ।।
भो प्रभु मुझ मंत्री मरुभूत । क्यों नहिं आयौ ब्राह्मनपूत।।११९
यह सुनि अवधिवंत मुनिराय । सब विरतंत कह्यौ समुझाय ।।
राजा मन अति भयो मलीन । हा मंत्री सज्जनता लीन ।१२०
बरजत गयौ दुष्टके पास । कुमरन लह्यौ सह्यौ बहु त्रास ।।
होनहार सोई विधि होय । ताहि मिटाय सकै नहि कोय।।१२१
यों विचारि मन सोक मिटाय । साधु पूजि घर आये राय ।।
यह सुनि दुष्टसंग परिहरो । सुखदायक सतसंगति करो ।।१२२

छप्पय ।

तपे तवापर आय, स्वातिजलबूंद विनट्ठी ।
कमलपत्रपरसंग, वही मोतीसम दिट्ठी ।।
सागरसीप समीप, भयो मुक्ताफल सोई ।
संगतको परभाव, प्रगट देखो सब कोई ।।
यों नीचसंगतें नीचफल, मध्यमतें मध्यम सही ।।
उत्तमसंजोगतें जीवको, उत्तमफलप्रापति कही ।।१२३।।

इतिश्रीपार्श्वपुराणभाषायां मरुभूतिभववर्णनं नाम प्रथमोऽधिकारः ।१।

दूसरा अधिकार

दोहा।

अस्वसेन-कुल-चंद्रमा, वामा-उर-अवतार।
बंदौं पारसपदकमल, भविजनअलि आधार ॥१॥

पद्धरी छंद

इसभांति तजे मरुभूति प्रान। अब सुनो कथा आगे सुजान॥
अतिसघन सल्लकी बन विशाल। जहं तरुवर तुंग तमाल ताल॥
बहु बेलजाल छाये निकुंज। कहिं सूखि परे तिन पत्रपुंज॥
कहिं सिकताथल कहिं सुद्ध भूमि। कहिं कपि तरुडारन रहे झूमि
कहिं सजलथान कहिं गिरि उतंग। कहिं रोझ रोज विचरैं कुरंग॥
तिस थानक आरतध्यानदोष। उपज्यौ वनहस्ती वज्रघोष॥
अति उन्नत मस्तकसिखर जास। मद-जीवनझरना झरहिं तास
दीसै तमवरन विसाल देह। मनों गिरिजंगम दूसरो येह॥५॥
जाको तन नख शिख छोमवंत। मुसलोपम दीरघ धवल दंत॥
मदभीजे झलकैं जुगल गंड। छिन छिनसौं फेरैं सुंड दंड॥६॥
जो बरुना नामैं कमठ नार। पोदनपुर निवसै निराधार॥
सो मरि तिहिं हथिनो हुई आन। तिससंग रमै नित रंजमान॥
कबही बहु खंडैं बिरछबेलि। कबही रजरंजित करहिं केलि।
कबही सरवरमैं तिरहिं जाय। कबही जल छिरकैं मत्ताकाय॥
कबही मुख पंकज तोरि देय। कबही दह-कादो अंग लेय॥९॥

दोहा।

यों सुछंद क्रीड़ा करै, वरुना-हथिनी सत्थ।
वन निवसै वारण[1] बली, मारण-सील समत्थ[2] ।। १० ।।

चौपई।

एक दिवस अरविंद नरेस। ज्यों विमानमैं स्वर्ग सुरेस ।।
यों निजमहलन निवसै भूप। देख्यौ बादल एक अनूप ।।११।।
तुंग[3] सिखर अति उज्जल महा। मानों मंदिर ही बनि रहा।
नर[4]वै निरखि चितवै ताम। ऐसो ही करिये जिनधाम ।।१२।।
लिखन हेत कागद कर लयौ। इतने सो सरूप मिटि गयौ ।।
तब भूपति उरकरै विचार। जगतरीति सब अथिर असार।१३।
तन धन राज-संपदा सबै। यों ही विनसि जायगो अबै ।।
मोहमत्त प्रानी हठ गहै। अथिर वस्तुकौं थिर सरदहै ।।१४।।
जो पररूप पदारथजाति। ते अपने मानै दिनराति ।।
भोगभाव सब दुखके हेत। तिनहीकौं जानै सुखखेत ।।१५।।
ज्यों माचै[5]-कोदों[6] परभाव। जाय जथारथ दिष्टि स्वभाव ।।
समझै पुरुष औरकी और। त्यों ही जगजीवनकी दौर।१६।
पुत्र कलत्र[7] मित्रजन जेह। स्वारथ लगे सगे सब एह ।।
सुपनसरूप सकल संभोग। निजहितहेत विलंब न जोग।१७।
यों भूपति वैराग विचारि। डारी पोट परिग्रह भारि ।।
राजसमाज पुत्रकौं दियौ। सुगुरुसाखि नृप चारित लियौ।१८।
धरी दिगंबरमुद्रा सार। करै उचित आहार विहार ।।

१. हाथी २. समर्थ ३. ऊंचा ४. राजा ५. उन्मत्त ६. एकधान ७. स्त्री।

बारहविध दुद्धर तपलीन । छहोंकाय पीहर[1] परवीन ।।१९।।
एकसमय अरविंद मुनीस । सारथवाहीके संग ईस ।।
सिखर सुमेरु बंदनाहेत । चले ईरज्यापथ पग देत ।।२०।।
गये सल्लकी बनमैं संघ । तहां जाय उतरचो सब संघ ।।
निजसिज्झाय[2] समय मन लाय । प्रतिमाजोग दियौ मुनिराय।२१
तावत ८ज्रघोष गजराज । आयौ कोपि कालसम गाज ।
सकलसंघमैं खलबल परी । भाजे लोग कीकि[3] धुनि करी।।२२।।
गजके धकं परचो जो कोय । सो प्रानी पहुंच्यौ परलोय ।।
मारे तुरग[4] तिसाये गैल । मारे मारगहारे बैल ।। २३ ।।
मारे भूखे करहा[5] खरे । मारे जन भाजे भय भरे ।।
इहिविध हाथी करत सँघार । मुनि सनमुख आयौ किलकार ।२४
अति विकराल रोषविष भरौ । मुनि मारनकौ उद्यम करौ ।।
साधु सुदर्सन मेरु समान । सिरीवच्छ लच्छन उर थान ।२५।।
सो सुचिन्ह गज देख्यौ जाम । जाती-सुमरन उपज्यौ ताम ।।
ततखिन सांत भयौ गजईस । मुनिके चरन धरचौ निज सीस ।
तब मुनि चवै[6] मधुर धुनि महा । रे गयंद[7] यह कीनौं कहा।।
हिंसा करम परम अघहेत । हिंसा दुरगतिके दुखदेत ।।२७।।
हिंसासौं भमिये संसार । हिंसा निजपरकौं दुखकार ।।
तैं ये जीव विधुंसे आय । पातकतैं न डरचौ गजराय ।।२८।।
देखि देखि अघके फल कौन । लई विप्रतैं कुंजर[8]-जौन[9]।।

१. पीर हरने वाले । २ स्वाध्याय ३. किलकारी ४ घोड़ा ५ ऊंट ६. कहे
७. हाथी ८. हाथी ९ योनि ।

तू मंत्री मरुभूति सुजान । मैं अरविंद क्यों न पहिचान ॥२६॥
धर्मविमुख आरतके दोष । पसु-परजाय लई दुखकोष ॥
अब गजपति ये भाव निवारि । धर्मभावना हिरदं धारि ॥३०
सम्यकदरसन-पूरब जान । पालि अणुव्रत जब लौं प्रान ॥
सुन करिंद[1] उर कोमल थयौ । किये पाप निज निंदत भयौ।३१।

दोहा ।

फिर गुरु-पांयन सिर धरचौ, धर्म गहन उर हेत ॥
तब सत्यारथ धर्मविधि, कही साधु समचेत ॥३२॥

चौपई ।

सुन हस्ती सासन अनुकूल । सकल धरमकौ दर्सन मूल ॥
सब गुनरत्नकोष यह जान । मुक्ति-धौरहर[2]-धुर[3]-सोपान[4]।३३
तातैं यह सबहीकौ सार । या बिन सब आचरन असार ॥
जो सरदहै औरकी और । सो मिथ्यातभावकी दौर ॥३४॥
दोष अठारह-वरजित देव । दुविधसंगत्यागी[5] गुरु एव ।
हिंसावरजित धरम अनूप । यह सरधा समकितकौ रूप ।३५।

दोहा ।

संकादिक दूषन बिना, आठों अंग समेत ।
मोख-बिरछ-अंकूर यह, उपजै भवि-उर-खेत ॥३६॥

चौपई ।

अंगहीन दरसन जगमाहिं । भवदुखमेटन समरथ नाहिं ॥
अच्छरऊन[6] मंत्र जो होय । विषबाधा मेटं नहिं सोय ॥३७॥

१. हाथी २. महल ३. ध्रुव ४. सीढी ५. परिग्रह त्यागी ६. कम ।

तातैं यह निरनय उरम्रान । यह हिरदैं सम्यक् सरधान ।
पंच उदंबर तीन मकार । इनकौं तजि बारह व्रतधार ।।३८।।
इहि विध गुरु दीनौं उपदेस । बारण[1] हरषित भयौ विसेस ।
सुगुरुवचन सब हिरदैं धरैं । सम्यक् पूरव व्रत आदरैं ।।३९।।
बार बार भुविसौं[2] सिर लाय । मुनिवर चरन नमैं गजराज ।
चले साधु तिहिं हित उपजाय । तब हाथी आयौ पहुंचाय ।४०।

दोहा ।

करि उपगार मुनीस तहँ, कीनौं सुविधि विहार ।
बन निवसै गजपति व्रती, सुगुरु सीख उर धार ।।४१।।

चाल छन्द ।

अब हस्ती संजम साधैं । त्रसजीव न भूलि विराधैं ।।
समभाव छिमा उर आनैं । अरि मित्र बराबर जानैं ।।४२।।
काया कसि इन्द्री दंडै । साहस धरि प्रोषध मंडै ।।
सूखे तृन पल्लव भच्छैं । परमर्दित[3] मारग गच्छैं ।।४३।।
हाथीगन डोह्यौ[4] पानी । सो पीवैं गजपति ग्यानी ।।
देखे बिन पांव न राखैं । तन पानी पंक न नाखैं ।।४४।।
निजसील कभी नहिं खोवैं । हथिनीदिस भूलि न जोवैं ।
उपसर्ग सहै अति भारी । दुरध्यान तजैं दुखकारी ।।४५।।
अघके भय अंग न हालै । दिढ़ धीर प्रतिग्या पालै ।।
चिरलौं दुद्धर तप कीनौं । बलहीन भयौ तन छीनौं ।।४६।।

---

१. हाथी २. पृथ्वी से ३. दूसरों के द्वारा उपयोग में लिया हुआ ४. बिलोडित किया हुआ ।

परमेष्ठि परमपद ध्यावै । ऐसैं गज काल गमावै ।।
एकैं दिन अधिक तिसायौ । तब वेगवती तट आयो ।।४७।।
जल पीवन उद्यम कीधौ । कादो द्रह कुंजर बीधौ ।।
निहचैं जब मरन विचारी । संन्यास सुधी[1] तब धारी ।।४८।।
सो कमठ कलंकी मूवो । ता बन कुरकट अहि हूवो ।।
तिन आय डस्यौ गज व्याता । यह बैर महादुखदाता ।।४९।।

दोहा ।

मरन करचौ गजराज तब, राखे निर्मल भाव ।
सुरग बारवें सुर भयौ, देखौ धर्मप्रभाव ।।५०।।

चौपई ।

तहां स्वयंप्रभ नाम विमान । ससिप्रभदेव भयो तिहिं थान ।।
अवधि जोड़ सब जान्यौ देव । व्रतकौ फल पूरबभव भेव ।५१।
जिनसासन संसौ बहुभाय । धर्मविषैं दिढ़ता मन लाय ।।
सदा सासते श्रीजिनधाम । पूजा करी तहां अभिराम ।।५२।।
महामेरु नन्दीसुर आदि । पूजे तहां जिनबिंब अनादि ।
कल्यानक-पूजा बिस्तरै । पुन्य भंडार देव यों भरै ।।५३।।
सोलह सागर आयु प्रमान । साढ़े तीन हाथ तन जान ।
सोलह सहस वर्ष जब जाहिं । असन[2]-चाह उपजै उरमाहिं।५४।
अनुपम अमृतमय आहार । मनसौं भुंजै देवकुमार ।
आठदुगुन[3] पख बीतैं जास । तब सो लेय सुगंध उसास ।५५।
अवधि चतुर्थ अवनि परजंत । यही विक्रियाबल विरतंत ।

१. समझदार २. भोजन ३. सोलह ।

अवधिछेत्र जावत परमान। होय विक्रिया तावत मान ।५६।

दोहा।

वदनचंद्र[1] उपमा धरैं, विकसित वारिज[2] नैन।
अंग अंग भूषन लसैं, सब बानक[3] सुखदैन ।।५७।।
सुन्दर तन सुन्दर वचन, सुन्दर स्वर्गनिवास।
सुन्दर वनितामंडली, सुन्दर सुरगन दास ।।५८।।
अणिमा महिमा आदि दे, आठ रिद्धि फल पाय ।।
सुर सुछंदक्रीड़ा करैं, जो मन वरतै आय ।।५९।।
सुनत गीत-संगीत-धुनि, निरखत निरत रसाल ।।
सुखसागरमैं मगन सुर, जात न जानै काल ।।६०।।
लोकोत्तम सब संपदा, अनुपम इन्द्री-भोग ।।
सुफल फल्यौ तपकलपतरु, मिल्यौ सकल सुखजोग ।।६१।
जैवंतो वरतो सदा, जैनधर्म जग माँहि।
जाके सेवत दुखसमुद, पसुपंछी तिर जाँहि ।।६२।।

छन्द।

इसही जम्बूदीप, पूर्व विदेह मझारैं,
पुहकलावती देस, विकसत नैन निहारैं।।६३।।
तहां विजयारध नाम, सौहै सैल रवानो[4]।
उज्जल वरन विसाल, रूपमई गिरिरानो[5] ।।६४।।
जोजन परम पचास, भूमिविसैं चौड़ाई।

१. चन्द्रमुख २ कमल ३. बनाव। ४ सुन्दर ५ पहाड़ों का राजा।

तुंग[1] पचीस प्रमान, सोभा कही न जाई ॥६५॥
चौथाई भूमांझ, नौ सिर कूट विराजैं।
सिद्धसिखर जिनधाम, मणिप्रतिमा तहां छाजैं ॥६६॥
उत्तर दक्षिन ओर, श्रेणी दोय जहां हैं।
दोय गुफा गिरि हेठ[2], अति अंधियार तहां है ॥६७॥
तापर स्वर्ग समान, लोकोत्तम पुर सोहै।
बापी-कूप-तलाब,-मंडित सुर मनमोहै ॥६८॥
विद्युतगति भूपाल, न्याय प्रजा प्रतिपालै।
नीतिनिपुन धर्मज्ञ, संत सुमारग चालै ॥६९॥
विद्युतमाला नांव, ता घर नारि सयानी।
मानौं मनमथ[3] जोग, आय मिली रतिरानी ॥७०॥
तिनकै सो सुर आय, पुत्र भयौ बड़भागी।
अगनिवेग तसु नाम, अति सुन्दर सौभागी ॥७१॥
सोमप्रकृति[4] परवीन, सकलसुलच्छनधारी।
जिनपदभक्ति पुनीत, सबहीकौं सुखकारी ॥७२॥
राजसंपदा भोग, भुंजत पुन्यनियोगैं।
एक दिना इन साधु, भेंटे भाग संजोगैं ॥७३॥
स्रवन सुन्यौ उपदेश, भर जोबन वैराग्यौ ॥
आसनभव्य[5] कुमार, संजमसौं अनुराग्यौ ॥७४॥
तजि परिग्रह गुरुसाख, पंचमहाव्रत लीनैं।

१ ऊंचा २. पास ३. कामदेव ४ सौम्य स्वभावी ५. निकट भव्य।

दुद्धर तप आराध, रागादिक कृस कीनें ॥७५॥
छीन किये परमाद, विचरें एकबिहारी।
बारह अंग समुद्र, पार भयौ श्रुतधारी ॥७६॥
एक दिवस धरि जोग, हिमगिर कंदर[1] माहीं।
निवसै[2] आतमलीन, बाहरकी सुधि नाहीं ॥७७॥

दोहा।

कुरकट नामा कमठचर, दुष्टनाग दुखदाय।
सो मरि पंचम नरकमैं, परयौ पापवस जाय ॥७८॥
छेदन भेदन आदि बहु, तहां वेदना घोर।
सहस जीभसौं वरनिये, तऊ न आवै ओर ॥७९॥
ऐसे दुखमैं कमठ जिय, कीनी पूरन आव।
सत्रह सागर भुगतकैं, निकस्यौ क्रूरसुभाव ॥८०॥

चौपई।

बैर भाव उरतैं नहि टरयौ। फेरि आय अजगर अवतरयौ॥
संसकारवस आयौ तहां। हिमगिरिगुफा मुनीसुर जहां ॥८१॥
मिले साधु संजमधर धीर। समभावनतैं तज्यौ सरीर॥
लीनौं स्वर्गसोलवैं बास। जो नितनिरुपमभोगनिवास ॥८२॥
जन्म-सेजतैं जोवन पाय। उठयौ अमर[3] संपूरन काय॥
देखि संपदा विस्मय भयौ। अवधि होत संसै सब गयौ ॥८३॥
पूजा करी जिनालय जाय। भक्ति-भाव-रोमांचित काय॥
पूरवसंचित पुन्यसंजोग। करै तहां सुर वांछित भोग ॥८४॥

१. गुफा २. बसै ३. देव।

गये बरस बाईस हजार। भोजन भुंजै मनसाहार ।।
तावतमान पच्छ जब जाय। तब ऊसांसौं[1] दिसि[2] महकाय ।।८
देखै पंचम-[3] भूपरजंत। अवधिग्यानबल मूरतिवंत ।।
तितनैं मान विक्रिया करै। गमनागमन हियै जब धरै ।।८
तीन हाथ अति सुन्दर काय। लेस्या सुकल महा सुखदाय।
थिति सागर बाईस विसाल। इहिविध बीतै सुखमैं काल ।।८

दोहा।

आदि अंत जिस धर्मसौं, सुखी होय सब जीव।
ताकौं तनमनवचनकरि, हे नर सेव सदीव ।।८८।।

इतिश्रीमत्पार्श्वनाथपुराणभाषायां गजस्वर्गगमनविद्याधरभव-विद्युत्प्रभदेव भववर्णनं नाम द्वितीयोऽधिकारः ।।२।।

तीसरा अधिकार

दोहा

अस्वसेनकुल-कमल रवि[4], वामाकुंवर कृपाल।
बन्दौं पारसचरन जुग, सरनागत-प्रतिपाल ।।१।।

चौपई

जम्बूदीप बसै चहुफेर। जाके मध्य सुदर्शन मेर।
कंचनमनिमय अतुलसुहाग। ता पर्वतके पच्छिम भाग ।।२।।
अपरविदेह[5] विराजै खेत। सो नित चौथेकाल समेत।

१. उछ्वास २. दिशा ३. पाचवें नरक ४. सूर्य ५. पश्चिम विदेह।

पदपद जहां दिपैं[1] जिनधाम । नहीं कुदेवनको विसराम ।।३।।
जैनजतीजन दीखैं सोय । नहीं कुलिंगी[2] दीखै कोय ।
उत्तमधर्म सदा थिर रहे । हिंसाधर्म प्रकाश न लहै ।।४।।
तीनों वरन बसें जहां लोय । ब्राह्मनवरन कभी नहिं होय ।
तामैं पदमदेस अभिराम । सोहै नगर अस्वपुरनाम ।।५।।
तहां वज्जवीरज भूपाल । न्यायें प्रजा करै प्रतिपाल ।
गुणनिवास सूरजसम दिपे । आन[3] भूप उडगन[4] छबि छिपैं।६।
विजया नामैं नरपति-नारि । रूपवंत रतिकी उनहारि ।
पटरानी सबमैं परधान । पूरवपुन्य उदय गुणखान ।।७।।
एक समय निसिपच्छिमजाम । पंच सुपन देखे अभिराम ।
मेरु दिवाकर-चद्र-विमान । सजल सरोवर सिंधुसमान ।।८।।
प्रात भये आई पियपास । विकसत लोचन हियें हुलास ।
रातसुपन अवलोके जेह । नृप आगैं परकासे तेह ।।९।।
तब नरिन्द बोले बिहसाय । सुन्दर बचन श्रवन-सुखदाय ।
सुनि रानी इनको फल जोय । पुत्र प्रधान तिहारे होय ।।१०।।
ऐसे वच पियके अवधारि । अति आनन्द भयो नृपनारि ।
अचुत स्वर्गतैं सो सुर चयौ । वज्रनाभि नामा सुत भयौ ।।११।।
चौसठ लच्छन लच्छित काय । पुन्यजोग जिमि उतरचौ आय ।
जनममहोच्छव राजा कियौ । जिन पूजे जाचक धन दियौ ।।१२।।
बढ़ै बाल जिमि बालक-चंद । सुजनलोकलोचन[5] सुखकंद ।

---

१ शोभा पावे २. खोटे भेषधारी ३. दूसरा ४. तारा ५. सज्जन लोगों के नेत्रों को ।

क्रमक्रमसौं सिसु भयौ कुमार । पढ़ लीनी विद्या सब सार ।
जोबनवंत कुमर जब भयौ । निर्मल नीतिपंथ पग ठयौ ।
रूप-तेज-बल-बुद्धि-विज्ञान । सकल सारगुणरत्ननिधान ।१४।
कीनी पिता ब्याहविधि जोग । राजसुता बहु बरीं मनोग[१] ।
क्रमकरि कुमर पितापद पाय । राज करै थुति[२] करिय न जाय
पुन्यजोग आयुधगृह[३] जहां । चक्ररतन वर उपज्यौ तहां ।
छहोंखंडवरती भूपाल । बस कीनें नाये निजभाल ।।१६।।
देव दैत्य विद्याधर नये । नृप मलेच्छ सब सेवक भये ।
बढ़ी संपदा पुन्यसंयोग । इन्द्रसमान करै सुखभोग ।।१७।।

दोहा ।

संपूरन सुख भोगवै, वज्रनाभि चक्रेस ।
तिस बिभूतिबल बरनऊं, जथासकति लवलेस[४] ।।१८।।

चौपई ।

सहस बतीस सासते देस । धनकनकंचन भरै बिसेस ।
विपुल[५] बाड़ बेढ़े चहुँओर । ते सब गांव छानवै कोर ।।१६।
कोट कोट दरवाजे चार । ऐसे पुर छब्बीसहजार ।
जिनकौं लगै पांचसौं गांव । ते अटंब चउ[६]सहस सुठांव ।।२०
पर्वत और नदीके पेट । सोलह सहस कहे वे खेट ।
कर्वट नाम सहस चौबीस । केवल गिरिधर बेढ़े दीप ।।२१।।
पत्तन अड़तालीस हजार । रतन जहां उपजै अति सार ।

---

१. सुन्दर २. स्तुति ३. शास्त्र भंडार ४. थोड़ी ५. घने ६. चार हजार ।

एकलाख द्रोणीमुख[1] वोर। सहस घाट सागरके तीर ।।२२।
गिरि ऊपर संबाहन[2] जान। चौदह सहस मनोहर थान।
अट्ठाईस हजार असेस। दुर्ग[3] जहां रिपुको न प्रवेस ।।२३।।
उपसमुद्रके मध्य महान। अंतरदीप छपन परिमान।
रतनाकर छब्बीस हजार। बहु विध सार वस्तुभंडार ।।२४।।
रतनकुच्छ[4] सुन्दर सातसै। रतनधरा थानक जहँ लसै।
इन पुरसौं बस राजै खरे। जैनधाम धरनी जनभरे ।।२५।।
वर गयंद चौरासीलाख। इतने ही रथ आगम-साख।
तेज तुरंग अठारह कोर। जे बढ़ चलैं पदनतैं जोर ।।२६।।
पुनि चौरासी कोटि प्रमान। पायक[5] संघ बड़े बलवान।
सहस छानवै वनिता[6] गेह। तिनको अब विवरन सुन लेह।।२७
आरजखंड बसैं नरईस। तिनकी कन्या सहस बतीस।
इतनी ही अतिरूप रसाल। विद्याधरपुत्री गुनमाल ।।२८।।
पुनि मलेच्छ भूपनकी जान। राजकुमारी तावतमान।
नाटकिगन बत्तीस हजार। चक्री नृपकौं सुखदातार ।।२९।।
आदि सरीर[7] आदि[8] संठान। पूर्वकथित तन लच्छन जान।
बहुविध विंजन[9] सहित मनोग। हेमवरन[10] तन सहजनिरोग। ३०
छहों खंड भूपति बलरास। तिनसौं अधिक देहबल जास।
सहस बतीस चरनतल रमैं। मुकटबंधराजा नित नमैं ।३१।

१. द्रोणाचार्य जैसे २. निवास स्थान ३. किले ४. रत्नों की खान ५. पैदल सिपाही ६. स्त्री ७. परमौदारिक शरीर ८. समचतुरस्रसंस्थान ९. तिल आदि चिह्न १०. स्वर्ण के समान रंग।

भूप मलेच्छ छोरि अभिमान । सहस अठारह मानैं आन ।
पुनि गनबद्ध बखानैं देव । सोलह सहस करैं नृप सेव ।।३२।।
कोटि थाल कंचननिर्मान । लाखकोटि हलसहित किसान ।
नाना वरन गऊकुल[1] भरे । तीनकोटि व्रज[2] आगम धरे ।३३।

दोहा ।

अब नवनिधिके नाम गुन, सुनो जथारथरूप ।
जैनी बिन जानैं नहीं, जिनकौं सहज सरूप ।।३४।।

चौपई ।

प्रथम कालनिधि सुभ आकार । सो अनेक पुस्तकदातार ।
महाकालनिधि दूजी कही । याको महिमा सुनियौ सही।३५।
असि मसि आदिक साधन जोग । सामग्री सब देय मनोग ।
तीजी निधि नैसर्प महान । नाना विध भाजनको खान ।३६।
पांडुक नाम चतुरथी होय । सब रसधान समप्पैं सोय ।
पदम पंचमी सुकृत खेत । वांछित वसन निरंतर देत ।।३७।।
मानव नाम छठी निधि जेइ । आयुधजात[3] जन्मभू देह ।
सप्तम सुभग पिंगला नाम । बहुभूषन आपैं अभिराम ।।३८।।
संख निधान आठमी गनो । सब वाजित्र-भूमिका बनी ।
सर्वरत्न नवमी निधि सार । सो नित सर्वरत्नभंडार ।।३९।।

दोहा ।

ये नौनिधि चक्रेसकै, सकटाकृत[4] संठान[5] ।
आठचक्रसंजुक्त सुभ, चौखूंटी सब जान ।।४०।।

---

१. गोशाला २. पशु स्थान ३. शस्त्र निर्माण ४. गाडी के आकार ५. आकार

जोजन आठ उतंग अति, नव जोजन विस्तार ।
बारह मित[1] दीरघ सकल, बसं गगन निरधार ।।४१।।
एक एकके सहस मित, रखवाले जखदेव[2] ।
ये निधि नरपति पुन्यसौं, सुखदायक स्वयमेव ।।४२।।

चौपई ।

प्रथमसुदरसन चक्रपसत्थ[3] । छहोंखंडसाधन समरत्थ ।
चंडवेग दिढदंड दुतीय । जिस बल खुलै गुफा गिरिकीय ।४३।
चर्मरत्न सो तृतिय निवेद । महा वज्रमय नीर अभेद ।
चतुरथ चूडामनि मति-रैन । अंधकारनासक सुखदैन ।।४४।।
पंचम रत्न काकिनी जान । चिंतामनि जाकौ अभिधान[4] ।
इन दोनौंतै गुफामंझार । ससिसूरज लखिये निरधार ।४५।
सूरजप्रभ सुभ छत्र महान । सो अति जगमगाय ज्यौं भान[5] ।
सोनंदक असि[6] अधिक प्रचंड । डरै देखि बैरी बलबंड ।४६।
पुनि अजोध सेनापति सूर । जो दिगविजय करै बल भूर ।
बुधसागर प्रोहित परवीन । बुधिनिधान विद्यागुनलीन ।।४७।।
थपित[7] भद्रमुख नाम महंत । सिल्पकलाकोबिद[8] गुनवंत ।
कामवृद्ध गृहपति विख्यात । सब गृहकाज करै दिनरात ।४८।
व्याल विजयगिरि अति अभिराम । तुरग[9] तेज पवनंजय नाम ।
बनिता नाम सुभद्रा कही । छूरै वज्ज पानि[10] सौं सही ।४६।

१. प्रमाण २ यक्षदेव ३. प्रशस्त ४. नाम ५ सूर्य ६. तलवार ७. शिल्पकार ८. विद्वान ६. घोडा १०. हाथ ।

महादेहबल धारै सोय । जा पटतर[1] तिय अवर न कोय ।
मुख्यरतन यह चौदह जान । और रतनकी कौन प्रमान।।५०

दोहा ।

राजअंग चौदह रतन, विविध भांति सुखकार ।
जिनकी सुर सेवा करैं, पुन्यतरोवर-डार ।।५१।।
चक्र छत्र असि दंडमनि, चर्म काकिनी नाम ।
सात रतन निर्जीव यह, चक्रवर्ति के धाम ।।५२।।
सेनापति गृहपति थपित, प्रोहित नाम तुरंग ।
वनिता मिलि सातौं रतन, ये सजीव सरवंग ।।५३।।
चक्र छत्र असि दंड ये, उपजें आयुधथान ।
चर्म काकिनी मनिरतन, श्रीगृह उतपति जान ।।५४।।
गज तुरंग तिय तीन ये, रूपाचलतें होत ।
चार रतन बाको विमल, निजपुर लहैं उदोत ।।५५।।

चौपई ।

मुख्य संपदाको विरतंत । आगैं और सुनो मतिवंत ।
सिंहबाहनी सेज मनोग । सिंहारूढ[2] चक्रवै[3] जोग ।।५६।।
आसन तुंग अनुत्तर नाम । मानिकजालजटित अभिराम ।
अनुपम नामा चमर अनूप । गंगातरल-तरंग-सरूप ।।५७।।
विद्युतदुति मनिकुंडल जोट । छिपै और दुति जाकी ओट ।
कवच अभेद अभेद महान । जामैं भिदैं न बैरीवान ।।५८।।
विसमोचिनी पादुका[4] दोय । परपदसौं विष मुंचै सोय ।

१ तुलना में २. सिंहों पर रखी हुई ३ चक्रवति के योग्य ४. खड़ाऊं ।

अजितंजै रथ महारवन्न[1]। जलपैं थलवत करै गवन्न[2] ।।५९।।
वज्रकांड चक्रीधर चाप। जांहि चढ़ावत नरपति आप।
वान अमोघ[3] जबै कर लेत। रनमैं सदा विजय वर देत।६०।
विकट वज्रतुंडा अभिधान[4]। सत्रुखंडिनी सकती जान।
सिंहाटक बरछी विकराल। रतनदंड लागी रिपुकाल।।६१।।
लोहबाहिनो तीखन छुरी। जिमि चमकै चपलादुति[5] दुरी[6]।
ये सब वस्तुजाति भूमांहि। चक्री छूट और घर नांहि।६२।

दोहा।

मनोवेग नामा कणय (?), ग्रंथन कह्यौ विख्यात।
खेटभूतमुख नाग है, दोनों आयुध जात ।। ६३ ।।

चौपई।

आनन्दन भेरी दस दोय। बारह जोजन लौं धुनि होय।
वज्रघोस पुनि जिनकौ नाम। बारह पटह[7] नृपति के धाम।६४।
वर गंभीरावर्त गरीस। सोभनरूप संख चौबीस।
नानावरन धुजा रमनीय। अड़तालीस कोट मित कीय।६५।
इत्यादिक बहुवस्तु अपार। बरनन करत न लहिये पार।
महलतनो रचना असमान। जिनमत कही सो लीजै जान।।

दोहा।

चक्री नृपकी संपदा, कहै कहां लौं कोय।
पुन्यबेल पूरब बई, फली सांधनी[8] सोय ।।६७।।

---

१. सुन्दर २. गमन ३, अचूक ४. नाम ५. बिजली ६. तेज ७. नगकारे ८. घनी

इहि विध वज्रनाभि नरराय । करैं भोग चक्रीपद पाय ।
धर्मध्यान अहनिसि[1] आचरैं । निर्मल नीतिपंथ पग धरैं ।।६८।।
पूजा करैं जिनालय जाय । पूजे सदा गुरू के पाय ।
सामायिक साधैं अघनास । करैं परव[2] प्रोषधउपवास ।।६९।।
चारप्रकार दान नित देय । औगुन त्यागैं गुन गह लेय ।
सप्त सील पालैं बड़भाग । मनवचकाय धर्मसौं राग ।।७०।।
सिंहासनपर बैठि नरेश । करे पुनीत[3] धर्म उपदेश ।
सुजन सभाजन किंकरलोग । देय सुहितसिच्छा सब जोग।।७१।।

दोहा ।

बीजराखि फल भोगवैं, ज्यों किसान जगमांहि ।
त्यों चक्रीनृप सुख करैं, धर्म बिसारैं नांहि ।।७२।।

नरेन्द्र अथवा जोगीरासा।

इहिविध राज करै नरनायक, भोगै पुन्य विसालो ।
सुखसागरमैं रमत निरंतर, जात न जानै कालो ।।७३।।
एक दिना सुभकर्मसंजोगे, छेमंकर मुनि बन्दे ।
देखे श्रीगुरु के पदपंकज, लोचन अलि आनन्दे ।।७४।।
तीन प्रदच्छन दे सिरनायौ, करि पूजा थुति कीनी ।
साधु समीप विनय कर बैठ्यौ, पांयनमैं दिठ[4] दीनी ।।७५।।
गुरु उपदेस्यौ धर्म सिरोमनि, सुनि राजा वैरागे ।
राज रमा[5] वनितादिक जे रस, ते-रस बेरस[6] लागे ।।७६।।

१. रात-दिन २. अष्टमी चतुर्दशी ३. पवित्र ४. दृष्टि ५. लक्ष्मी ६. बुरे स्वाद वाले ।

मुनिसूरजकथनी किरनावलि, लगत भरमबुध भागी ।
भव-तन-भोगसरूप विचारैं, परम-धरम-अनुरागी ।।७७।।
इस संसार महावनभीतर, भ्रमते ओर न आवै ।
जामन-मरन-जरा-दौं[1] दाझ्यौ, जीव महादुख पावै ।।७८।।
कबहो जाय नरकथिति भुंजै छेदन भेदन भारी ।
कबहो पसु परजाय धरै तहँ, बध बंधन भयकारी ।।७९।।
सुरगतिमैं परसंपति देखै, रागउदय दुख होई ।
मानुष जोनि अनेक विपतिमय, सर्वसुखी नहि कोई ।।८०।।
कोई इष्टवियोगी बिलखै, कोई असुभसँजोगी ।
कोई दीन दारिद्र बिगूचे[2], कोई तनके रोगी ।।८१।।
किसही घर कलिहारी[3] नारी, कै बैरी सम भाई ।
किसहीकै दुख बाहर दीखै, किसही उर दुचिताई[4] ।।८२।।
कोई पुत्र बिना नित झूरै, होय मरै तब रोवै ।
खोटी संततिसौं[5] दुख उपजै, क्यों प्रानी सुख सोवै ।।८३।।
पुन्यउदय जिनकै तिनकौं भी, नाहि सदा सुख साता ।
यों जगवास जथारथ देखत, सब दीखै दुखदाता ।।८४।।
जो संसारविषै सुख हो तो, तीर्थङ्कर क्यों त्यागै ।
काहेकों सिवसाधनकर ते, संजमसौं अनुरागै ।।८५।।
देह अपावन अथिर घिनावन, यामैं सार न कोई ।
सागरके जलसौं सुचि[6] कीजै, तौ भी सुचि नहि होई ।।८६।।
सात कुधातमई मलमूरति, चामलपेटी सोहै ।

१ आग २ दुखी ३ लड़ाई करने वाली ४ चिन्ता ५ सन्तान से ६ पवित्र

अंतर देखत या सम जगमैं, और अपावन को है ॥८७॥
नव मलद्वार[1] स्रवैं निसिवासर नांव लियें घिन आवै।
व्याधि उपाधि[2] अनेक जहां तहां, कौन सुधी सुख पावै ॥८८॥
पोखत तौ दुख दोख करै सब, सोखत सुख उपजावे।
दुर्जन देहसुभाव बराबर, मूरख प्रीति बढ़ावै ॥८९॥
राचनजोग[3] स्वरूप न याकौ, विरचनजोग[4] सही है।
यह तन पाय महा तप कीजै, यामैं सार यही है ॥९०॥
भोग बुरे भवरोग बढ़ावैं, बैरी हैं जग जीके।
बेरस[5] होंहि विपाक[6] समै अति, सेवत लागैं नीके ॥९१॥
वज्र अगनि विषसौं विषधरसौं,[7] ये अधिके दुखदाई।
धर्मरतनके चोर चपल ये, दुर्गतिपंथ सहाई ॥९२॥
ज्यों ज्यों भोग सँजोग मनोहर, मनवांछित जन पावै।
तिसना नागनि त्यों त्यों डंकै, लहर जहरकी आवै ॥९३॥
मोह उदय यह जीव अग्यानी, भोग भले कर जानै।
ज्यों कोई जन खाय धतूरो, सो सब कंचन[8] मानै ॥९४॥
मैं चक्री पद पाय निरंतर, भोगे भोग घनेरे।
तौ भी तनिक भये नहिं पूरन, भोगमनोरथ मेरे ॥९५॥
राज-समाज महा अघकारन, बैर बढ़ावनहारा।
वेस्यासम लछमी अति चंचल, याकौ कौन पत्यारा[9] ॥९६॥

(१ दो कान, दो नाक, दो आंख, मुंह, गुदा, लिंग या योनी–ये ९ मल द्वार हैं) २ मानसिक चिन्ता ३ प्रेम करने योग्य ४ विरक्त होने योग्य। ५ आनन्दहीन ६ फल ७ सांप ८ सोना ९ विश्वास।

मोह महा रिपु बैर विचारा, जगजिय संकट डाले ।
घर कारागृह बनिता बेड़ी, परिजन जन रखवाले ।।९७।।
सम्यकदरसन-ग्यान-चरन-तप, ये जियके हितकारी ।
ये ही सार असार और सब, यह चक्री चित धारी ।।९८।।
छोड़े चौदह रतन नवौं निधि, अरु छोड़े संग साथी ।
कोड़ि अठारह घोड़े छोड़े, चौरासी लख हाथी ।।९९।।
इत्यादिक संपति बहुतेरी, जीरन-तिन[1] ज्यों त्यागी ।
नीति विचार नियोगी[2] सुतकौं, राज दियौ बड़भागी ।।१००।।
होय निसल्य अनेक नृपति सँग, भूषन वसन उतारे ।
श्री गुरुचरन धरी जिनमुद्रा, पंच महाव्रत धारे ।।१०१।।
धन यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम[3], धन यह धीरजधारी ।
ऐसी संपति छोरि बसे बन, तिन पद ढोक हमारी ।।१०२।।

दोहा ।

परिग्रहपोट उतारि सब, लीनौं चारित पंथ ।
निज सुभावमैं थिर भये, वज्रनाभि निरग्रंथ ।।१०३।।

चौपई ।

बारहविध दुद्धरतप करैं । दसलच्छनी धरम अनुसरैं ।।
पढ़ैं अंग-पूरब[4] श्रुत सार । एकाकी विचरैं अनगार ।।१०४।।
ग्रीषमकाल बसैं गिरिसीस । बरसामैं तरुतल मुनिईस ।।
सीतमास तटिनीतट[5] रहैं । ध्यान अगनिमैं कर्मनि दहैं ।।१०५।।

---

१ पुराना तिनका २ हकदार (बड़ा) ३ संसार में उत्तम ४ ग्यारह अंग चौदह पूर्व । ५ नदी किनारे ।

एक दिना बनमैं थिर काय । जोग दिये ठाड़े मुनिराय ।।
कमठजीव अजगर-तन छोरि । उपज्यौ छठे नरक अतिघोर ।
थिति सागर बाईस प्रमान । देखे दुख जानैं भगवान ।।
पूरनआयु भोगकर मर्यौ । बनहिं कुरंग[1]भील अवतर्यौ। १०७
कालसरूप वदन विकराल । बनचर जीवनको छयकाल[2] ।
धनुषबान लीये निजपान[3] । भ्रमै मांसलोभी बन थान ।।१०८।।
सो पापी चल आयौ तहां । जोगारूढ खड़े मुनि जहां ।।
सत्रुमित्रसौं सम कर भाव । लगे आपमैं सुद्धसुभाव ।।१०९।।
कुंकुम[4] कादो[5] महल मसान । कोमल सेज कठिन पाषान ।
कंचन काच दुष्ट अरु दास । जीवन मरन बराबर जास ।।११०
निर्ममत्त तनकी सुधि नाहिं । सातौं भय-वरजित उरमाहिं ।।
देखि दिगंबर[6] कोप्यौ नीच । कंपित अधर दसनतल[7]भींच। १११
तान कमान कान लौं लई । तीखन[8] सर[9] मार्यौ निरदई ।।
मुनिवर धर्मध्यान आराध । दुखमैं धीरज तज्यौ न साध । ११२।
दरसनग्यानचरन तप सार । चारौं आराधन चित धार ।।
देहत्याग तब गये मुनिंद्र । मध्यम ग्रैवेयिक अहमिंद्र ११३।।
तहँ उपपादसिला निकलंक[10] । हंसतूल[11]जुत रतन पलंक ।।
उठ्यौ सेज तजि दीपत[12]काय । अलपकाल मैं जोबन पाय। ११४
देखैं दिसि अतिविस्मयरूप । महा मनोग विमान अनूप ।।
[illegible]ल तेज अहमिंद्र निहार । अवधिज्ञान उपज्यौ तिहिं बार। ११५

१ बदसूरत २ नष्ट करने वाला ३ अपने हाथ में ४ केशर ५ कीचड़ [illegible] ७ दांत ८ तीक्ष्ण ९ बाण १० कलंकरहित ११ रुई १२ चमकतीहुई ।

जान्यौं सब पूरब-भव--भेव । चारित बिरछ फल्यो सुखदेव ॥
अनुपम आठौं दरब सँजोय । रतनबिंब पूजे थिर होय ॥११६॥
आयो सुर हर्षित निजथान । महारिद्धि महिमा असमान ॥
तीनभवनवरती जिनधाम । भावभक्ति नित करै प्रनाम ॥११७॥
तीर्थङ्कर केवलि-समुदाय । निजथानक थित पूजै पाय ॥
पंचकल्यानक काल विचारि । प्रनमैं हस्तकमल सिरधारि ॥११८॥

दोहा ।

अनाहूत[1] अहमिंद्रगन, आवैं सहज सुभाय ।
धर्मकथा जिनगुनकथन, करैं सनेह बढ़ाय ॥११९॥
कबहीं रतनबिमानमैं, कबहीं महलमझार ।
कबहीं बनक्रीड़ा करैं, मिलि अहमिंद्रकुमार ॥१२०॥
और बास[2] निज बासतैं, उत्तम दीसैं नाहिं ॥
ताहीतैं ते अमरगन[3], और कहीं नहिं जाहिं ॥१२१॥
प्रीत भरे गुन आगरे[4], सुभग[5] सोम[6] श्रीमन्त ।
सातधात मलसौं रहित, लेस्या सुकल धरंत ॥१२२॥
सब समान-संपतिधनी, सब मानैं हम इन्द्र ।
कला ग्यान विग्यानसम, ऐसे सुर अहमिंद्र ॥१२३॥
सुकल बरन तनमनहरन, दोय हाथ परिमान ।
मानौं प्रतिमा फटिककी[7], महातेज दुतिवान ॥१२४॥

---

१ बिना बुलाये २ निवासस्थान ३ देवता ४ भंडार ५ सुन्दर ६ सौम्य प्र
७ स्फटिकमणि ।

कामदाह उरमैं नहीं, नहिं वनिताकौ राग ।
कल्पलोकके सुर सुखी, असंख्यातवैं भाग ।।१२५।।
सत्ताईस हजार मित बरस बीति जब जांहि ।
मानसीक आहारको, रुचि उपजै मनमांहि ।।१२६।।
साढ़े तेरह पच्छपर, लेत सुगंध उसास ।
छठी अवनि लौं जिन कही, अवधिविक्रिया जास ।।१२७।।
सागर सत्ताईस मित, परम आयु तिहि थान ।
सुभग सुभद्र विमानमैं, यों सुख करै महान ।।१२८।।

चौपाई ।

अब सो भील महादुखदाय । रुद्रध्यानसौं छोड़ी काय ।।
मुनिहत्या-पातकतैं मरचौ । चरम[1] सुभ्रसागरमैं[2] परचो ।१२९।

दोहा ।

कथा तहांके कष्टकी, को कर सके बखान ।
भुगतै सो जानै सही, कै जानै भगवान ।।१३०।।

दोहा ।

जनमथान सब नरकमैं, अंध अधोमुख जौन ।
घंटाकार[3] घिनावनी, दुसह[4] बास दुखभौन[5] ।।१३१।।
तिनमैं उपजैं नारकी, तल सिर ऊपर पाय ।
विषम वज्र कंटकमई, परैं भूमिपर आय ।।१३२।।
जो विषैल बीछू सहस, लगे देह दुख होय ।

१ अन्तिम २ नरक ३ लटकते हुए विजयघंट की तरह ४ न सहने योग्य ५ दुःख का घर ।

नरक धराके परसतैं, सरिस[1] वेदना सोय ।।१३३।।
तहां परत परवान अति, हाहा करते एम ।
ऊंचे उछलैं नारकी, तपे तवा तिल[2] जेम ।।१३४।।

सोरठा।

नरक सातवें माहिं, उछलन जोजन पांचसौ ।
और जिनागममाहिं, जथाजोग सब जानियो ।।१३५।।

दोहा।

फेर आन[3] भूपर परैं, और कहां उड़ि जाहिं ।
छिन्न भिन्न तन अति दुखित, लोट लोट बिललाहिं ।।१३६।।
सब दिसि देखि अपूर्व थल, चकित चित्त भयवान ।
मन सोचे मैं कौनहूं, पर्यौ कहां मैं आन ।।१३७।।
कौन भयानक भूमि यह, सबदुखथानक निंद ।
रुद्ररूप[4] ये कौन हैं, निठुर नारकीवृन्द ।।१३८।।
काले बरन कराल मुख, गुंजा[5] लोचन धार ।
हुँडक[6] डील[7] डरावने, करैं मार ही मार ।।१३९।।
सुजन न कोई दिठ परैं, सरन न सेवक कोय ।
ह्यां सो कछु सूझै नहीं, जासों छिन सुख होय ।।१४०।।
होत विभंगा अवधि तब, निजपरकौं दुखकार ।
नरक कूपमैं आपकौं, पर्यौ जान निरधार ।।१४१।।

---

१ सदृश-समान २ तपे हुए तवे पर तिल की तरह ३ आकर ४ भयानक
५ चिरमी ६ हुंडक संस्थान ७ शरीर ।

पूरबपापकलाप[1] सब, आप जाप[2] कर लेय ।
तब विलापकी ताप तप, पश्चात्ताप करेय ।।१४२।।
मैं मानुष परजाय धरि, धन-जोबन-मदलीन ।
अधम काज ऐसे किये, नरकबास जिन दीन ।।१४३।।
सरसोंसम[3] सुखहेत तब, भयौ लंपटी जान ।
ताहीको अब फल लग्यौ, यह दुख मेरु समान ।।१४४।।
कंदमूल मद मांस मधु, और अभच्छ अनेक ।
अच्छन-बस[4] भच्छन किये, अटक[5] न मानी एक ।।१४५।।
जल थल नभचारी विविध, बिलवासी बहु जीव ।
मैं पापी अपराध बिन, मारे दीन अतीव ।।१४६।।
नगरदाह कीनौं निठुर, गाम जलाये जान ।
अटवीमैं दीनी अगनि, हिंसा कर सुखमान ।।१४७।।
अपने इंद्रीलोभकों, बोल्यौ मृषा मलीन ।
कलपित ग्रंथ बनायकै, बहकाये बहु दीन ।।१४८।।
दावघातपरपंचसौं, परलछमी हर लीय ।
छलबल हठबल दरबबल, परबनिता[6] बस कीय ।।१४९।।
बढ़ी परिग्रहपोट सिर, घटी न घटकी चाह ।
ज्यों ईन्धनके जोगसौं, अगनि करै अतिदाह ।।१५०।।
बिन छान्यौ पानी पियौ, निसि[7] भुंज्यौ अविचारि ।
देवदरब खायौ सही, रुद्रध्यान उर धारि ।।१५१।।

१ समूह २ याद कर ३ सरसों के दाने के समान थोड़ासा ४ इन्द्रिय वश
५ रुकावट ६ परस्त्री ७ रात्रि में ।

कीनी सेव कुदेवकी, कुगुरुनकौं गुरु मानि ।
तिनहींके उपदेशसौं, पशु होमैं हित जानि ॥१५२॥
दियौ न उत्तमदान मैं, लियौ न संजमभार ।
पियौ मूढ़ मिथ्यातमद, कियौ न तप जगसार ॥१५३॥
जो धर्मीजन दयाकरि, दीनी सीख निहोर[1] ।
मैं तिनसौं रिस करि अधम, भाखे बचन कठोर ॥१५४॥
करी कमाई परजनम, सो आई मुझ तीर ।
हा हा अब कैसे धरूं, नरकधरामैं धीर ॥१५५॥
दुलभ नरभव पायकैं, केई पुरुष प्रधान ।
तपकरि साधैं सुरग सिव, मैं अभागि यह थान ॥१५६॥
पूरब संतन यों कही, करनी चालै लार ।
सो अब आंखन देखिये, तब न करी निरधार[2] ॥१५७॥
जिस कुटुंब के हेत मैं, कीनें बहुबिध पाप ।
ते सब साथी बीछड़े परयौ नरकमैं आप ॥१५८॥
मेरी लछमी खानकौं, सीरी[3] भये अनेक ।
अब इस विपत बिलापमैं, कोउ न दीखै एक ॥१५९॥
सारस सरवर तजि गये, सूखो नीर निराट[4] ।
फलबिन बिरख बिलौककैं, पंछी लागे बाट[5] ॥१६०॥
पंचकरन[6]-पोषन[7] अरथ, अनरथ किये अपार ।
ते रिपु ज्यों न्यारे भये, मोहि नरकमैं डार ॥१६१॥

१. उपकार करके २. निर्णय ३. साझीदार ४. नितान्त (बिलकुल) ५. रास्ता ६ पांचों इन्द्रियां ७. पुष्ट करने ।

तब तिलभर दुख सहनकौं, हुतो अधीरज भाव।
अब ये कैसे दुसह दुख, भरिहौं दीरघ आव[1] ॥१६२॥
अघ बैरीके बस परचौ, कहा करूं कित जाउं।
सुनै कौन पूछूं किसे, सरन कौन इस ठाउं ॥१६३॥
यहां कछू दुःख हतनको[2], उक्त[3] उपाव न मूर[4]।
थिति बिन विपतसमुद्र यह, कब तिरहौं तट दूर ॥१६४॥
ऐसी चिंता करत हू, बढ़ै बेदना एम।
घीव तेलके जोगतैं, पावक[5] प्रजुलै जेम ॥१६५॥

सोरठा।

इहिविध पूरब पाप, प्रथम नारकी सुधि करै।
दुखउपजावन जाप, होय विभंगा अवधितैं ॥१६६॥

दोहा।

तब ही नारकि निर्दई, नयो नारकी देख।
धाय धाय मारन उठै, महादुष्ट दुरभेख ॥१६७॥
सब क्रोधी कलही[6] सकल, सबके नेत्र फुलिंग[7]।
दुःख देनकौं अति निपुन, निठुर नपुंसकलिंग ॥१६८॥
कुंत[8] कृपान[9] कमान सर, सकती[10] मुगदर दंड।
इत्यादिक आयुध विविध, लिये हाथ परचंड ॥१६९॥
कहि कठोर दुर्वचन बहु, तिल तिल खंडै काय।
सो तबही ततकाल तन, पारे-वत मिल जाय ॥१७०॥

१. आयु २ नाश करने को ३ युक्ति ४ मूल ५ अग्नि ६ लड़ाई करने वाले ७ अग्नि बरसाने वाले ८ भाला ९ तलवार १० एकशस्त्र।

काटैंकर छेदैं चरन, भेदैं मरम विचारि ।
अस्थिजाल चूरन करैं, कुचलैं खाल उपारि ।। ७१।।
चीरैं करवत काठ ज्यों, फारैं पकरि कुठार ।।
तोड़ैं अंतरमालिका, अंतर उदर बिदार ।।१७२।।
पेलैं कोल्हू मेलकैं, पीसैं घरटी[1] घाल ।
तावैं ताते तेलमैं, दहैं दहन[2] परजाल ।।१७३।।
पकरि पांय पटकैं पुहुमि[3], झटकि परसपर लेंहि ।
कंटक सेज सुवावहीं, सूलीपर धरि देंहि ।।१७४।।
घसैं सकंटक रूखसौं, बैतरनी ले जांहि ।
घायल घेरि घसीटिए, किंचित करुना नांहि ।।१७५।।
केई रक्त चुवाव तन, बिलबल भाजैं ताम ।
पर्वत अंतर जायके, करैं बैठि विसराम ।।१७६।।
तहां भयानक नारकी, धारि विक्रिया भेख ।
बाघ सिंह अहि[4] रूपसौं, दारैं[5] देह विसेख ।।१७७।।
केई करसौं पांय गहि, गिरसौं देंहि गिराय ।
परैं आन दुभूंमिपर, खंड खंड हो जाय ।।१७८।।
दुखसौं कायर चित्तकरि, ढूंढैं सरन सहाय ।
वे अति निर्दय घातकी, यह अति दीन घिघाय[6] ।।१७९।।
व्रण[7]-वेदन नीकी करैं, ऐसे करि विश्वास ।
सींचैं खारे नीरसौं, जो अति उपजैं त्रास ।।१८०।।

१ चक्की २ अग्नि ३ पृथ्वी ४ सांप ५ बिदारे ६ चिल्लाना ७ घाव ।

केई जकरि जंजीरसौं, खैंचि थंभ प्रति बांधि ।
सुध कराय अब मारिये, नाना आयुध साधि ।।१८१।।
जिन उद्धत अभिमानसौं कीनैं परभव पाप ।।
तपतलोह आसनविषै, त्रास दिखावें थाप ।।१८२।।
ताती पुतली लोहकी, लाय लगावैं अंग ।
प्रीत करी जिन पूर्वभव, परकामिनि[1] के संग ।।१८३।।
लोचनदोषी जानिकैं, लोचन लेंहि निकाल ।
मदिरापानी पुरुषकौं प्यावैं तांबो गाल ।।१८४।।
जिन अंगनसौं अघ किये, तेई छेदे जाहिं ।
पल[2]-भच्छनके पापतैं, तोड़ि तोड़ि तन खाहिं ।।१८५।।
केई पूरब बैरके, याद दिवावैं नाम ।
कह दुर्वचन अनेक बिध, करैं कोप संग्राम ।।१८६।।
भये विक्रिया देहसौं, बहुविध आयुधजात[3] ।
तिनहीसौं अति रिस[4] भरे, करैं परस्पर घात ।।१८७।।
सिथिल होय चिर युद्धतैं, दीन नारकी जाम ।
हिंसानंदी असुर दुठ, आन भिरावैं ताम ।।१८८।।

सोरठा ।

तृतिय नरक परजंत, असुरादिक दुख देत हैं ।
भाख्यौ जिनसिद्धन्त, असुरगमन आगे नहीं ।।१८९।।

दोहा ।

इहिबिध नरक-निवासमैं, चैन एकपल नाहिं ।

---

१ परस्त्री २ मांस ३ शस्त्र ४ गुस्सा ।

तपैं निरंतर नारकी, दुखदावानलमाहिं ॥१९०॥
मार मार सुनिये सदा, छेत्र महा दुरगंध ।
वहै बात[1] असुहावनी, असुध छेत्र संबंध ॥१९१॥
तीनलोकको नाज सब, जो भच्छन कर लेय ।
तौहू भूख न उपसमै[2], कौन एक कन देय ॥१९२॥
सागरके जलसौं जहां, पीवत प्यास न जाय ।
लहै न पानी बूंदभर, दहै निरंतर काय ॥१९३॥
बायपित्तकफजनित जे, रोगजात जावंत ।
तिन सबहीको नरकमैं, उदय कह्यौ भगवंत ॥१९४॥
कटुतुंबी[3] सौ कटुक रस, करवतकी सी फांस ।
जिनकी मृत मंजारसौं[4], अधिक देहदुरबास[5] ॥१९५॥
जोजन लाख प्रमान जहँ, लोहपिंड गल जाय ।
ऐसी ही अति उसनता, ऐसी सीत सुभाय ॥१९६॥

अडिल्ल छंद

पंकप्रभापरजंत उसनता अति कही ।
धूमप्रभामैं सीत उसन दोनौं सही ॥
छठी सातमी भूमि में केवल सीत है ।
ताकी उपमा नांहि महा बिपरीत है ॥१९७॥

दोहा ।

स्वान[6] स्यार मंजारकी, पड़ी कलेवर-रास[7] ।
मास वसा[8] अरु रुधिरकी, कादौ जहां कुबास ॥१९८॥

१ हवा २ शान्त ३ कड़वीतूमड़ी ४ बिल्ली से ५ दुर्गन्ध ६ कुत्ता ७ शरीर ८ चर्बी

ठाम ठाम असुहावने, सेंभल तरुवर भूर ।
पैनें दुखदैनें विकट, कंटककलित करूर[1] ॥१९९॥
और जहां असिपत्र[2] बन, भीम तरोवर खेत ।
जिनके दल तरवारसे, लगत घाव करदेत ॥२००॥
वैतरिनी सरिता समल, लोहित लहर भयान ।
बहै खार सोनित[3] भरी, मांसकीच घिन घान ॥२०१॥
पंछी वायस[4] गीधगन, लोहतुंडसौं[5] जेह ।
मरम विदारैं दुख करैं, चूंटैं चहुंदिस देह ॥२०२॥
पंचेंद्री मनकौं महा, जे दुखदायक जोग ।
ते सब नरकनिकेतमैं[6], एकपिंड अमनोग ॥२०३॥
कथा अपार कलेसकी, कहै कहां लौं कोय ।
कोड़ जीभसौं बरनिये, तऊ न पूरी होय ॥२०४॥
सागरबंध प्रमानथिति, छिनछिन तीखन त्रास ।
ये दुख देखैं नारकी, परवस परे निवास ॥ २०५ ॥
जैसी परवस बेदना, सहै जीव बहु भाय ।
स्ववस सहै जो अंस भी, तौ भवजल तिरजाय ॥ २०६ ॥
ऐसे नरकहि नारकी, भयौ भील दुठ भाव ।
सागर सत्ताईसकी, धारी मध्यम आव ॥ २०७ ॥
सागर काल प्रमान अब, बरनौं औसर पाय ।
जिनसौं नरकनिवासकी, थिति सब जानी जाय ॥२०८॥

---

१ क्रूर २ तलवार की धार समान पत्ते ३ खून ४ कौआ ५ लोहे की सी चोंच ६ घर ।

चौपई ।

पहले तीन पल्यके भेव । एकचित्तकरि सो सुन लेव ।।
जिनसौं सागर उपजै सही । जथारीत जिनसासन कही।।२०६।।

सोरठा ।

प्रथम पल्य व्योहार, दुतिय नाम उद्धार भन ।
अर्धा त्रितिय विचार, अब इनकौ विस्तार सुन ।।२१०।।

चौपई ।

पहले गोल कूप कलपिये[1] । जोजन बड़े मान थरपिये ।।
इतनौ ही करिये गंभीर । बुधिबल[2] ताहि भरौ नर धीर।२११।
सात दिवसके भीतर जेह । जनै[3] भेड़के बालक[4] लेह ।
उत्तम भोगभूमिके जान । तिनके रोमअग्र मनआन ।।२१२।।
ऐसे सूच्छम करिये सोय । फेरि खंड जिनकौ नहि होय ।।
तिन सौं महाकूप वह भरौ । बारंबार कूट दिढ़ करौ ।।२१३।।
तिन रोमनकी संख्या जान । पैंतालीस अंक परवान ।।
ते श्रीजिनसासनमैं कहे । कर प्रतीत जैनी सरवहे ।।२१४।।

चामर छन्द ।

चार एक तीन चार पांच दो छ तीन ले ।
सुन्न तीन सुन्न[5] आठ दोय अंक सुन्न दे ।।
तीन एक सात सात सात चार नौ करौ ।
पांच एक दोय एक नौ समार दो धरौ ।।२१५।।

---

१. कल्पना कीजिए २. बुद्धि प्रमाण ३. पैदा हुए ४ भेड़ का बच्चा ५ बिन्दू

दोहा ।

सात बीस ये अंक लिखि, और अठारह सुन्न ।
प्रथम पल्यके रोमकी, यह संख्या परिपुन्न[1] ।।

चौपई ।

सौ सौ बरस बीत जब जाहि । एक एक काढ़ौ यामाहि ।।
ऐसी विध सब करते सोय । कूप[2] उदर जब खाली होय ।२१७
जो कछु लगै काल परवान[3] । सो व्योहार पल्य उरआन ।।
प्रथम पल्य सबतैं लघुरूप । बीजभूत भाख्यौ जिनभूप ।२१८।

दोहा ।

संख्या कारन जिन कह्यौ, और न यासौं काज ।
दुतिय पल्य विवरन सुनों, जो भाख्यौ जिनराज ।।२१९।।

चौपई

पूरवकथित रोम सब धरौ । तिनके अंस कल्पना करौ ।।
बरस असंख कोटिके जिते । समय होहिं आतम परिमिते[4]।२२०।
एक एकके तावत[5] मान । करौ भाग विकलप[6] मन आन ।।
याविध ठान रोमकी रास । समय समय प्रति एक निकास ।।
जितनौ काल होय सब येह । सो उद्धार पल्य सुन लेह ।।
याकै रोमनसौं परवान । दीपोदधिकी संख्या जान ।।२२२।।

दोहा ।

कोड़ाकोड़ि पचीसके, पल्य रोम जावंत ।
तितनै दीप समुद्र सब, बरनैं जैनसिधंत ।।२२३।।

---

१. परिपूर्ण २. कुआं ३. प्रमाण ४. प्रमाण ५ उतने ६. विचार ।

चौपई।

अब सुन त्रितिय पल्य की कथा। श्रीजिनसासन बरनी जथा।
दुतियपल्यके अमित[1] अपार। रोम अंस लीजै निर्धार।२२४
एक एकके भाग प्रमान। करि सौ बरस समय परवान।।
इहिबिध रासि होय फिर एह। समय समय प्रति लीजै तेह।।
ऐसे करत लगै जो काल। सोई अर्धापल्य[2] विसाल।।
करमनकी थिति यासौं जान। यह उत्कृष्ट कही भगवान।२२६

दोहा।

प्रथम पल्य संख्यातमित, दुतिय असंख्यप्रमान।
असंख्यातगुन तीसरौ, लिख्यौ जिनागम जान।।२२७।।
इन सब तीनौं पल्यमैं, अद्धापल्य महान।
दस कोड़ाकोड़ी गये, अद्धासागर ठान।।२२८।।
इस ही अद्धासिंधुसौं, पुन्यपाप परभाव।
संसारीजन भोगवैं, सुरगनरककी आव।।२२९।।
ऐसे दीरघ[3] काल लौं, नरक सातवें थान।
कमठ जीव दुख भोगवै, परचौ कर्मबस आन।।२३०।।
धिक धिक विषयकषायमल, ये बैरी जगमांहि।
ये ही मोहित जीवकौं, अवसि नरक ले जांहि।।२३१।।
धर्म पदारथ धन्य जग, जा पटतर[4] कछु नांहि।
दुर्गतिवास बचायकै, धरै सुरगसिवमांहि।।२३२।।

---

१ अप्रमाण २ अद्धापल्य ३ लम्बे ४ समान।

यही जान जिनधर्मकौं, सेवो बुद्धिविशाल ।
मन तन वचन लगायकै, तिहुँपन[1] तीनौं काल ।।२३३।।

इति श्रीमत्पार्श्वपुराणभाषायां वज्रनाभअहमिन्द्रसुखभिन्ननरक-दुःखवर्णनं नाम तृतीयोधिकारः ।।३।।

चौथा अधिकार ।

सोरठा—मारूथल[2] संसार, वामानंदन कलपतरु ।
वांछितफलदातार, सुखकामी सेवो सदा ।।१।।

चौपई ।

इसही जंबूदीपमझार । भरतखंड दच्छिन दिसि सार ।
कौसलदेस बसै अभिराम । नगर अजोध्या उत्तम ठान ।।२।।
आरजखंडमाहिं परधान । मध्यभाग राजै सुभथान ।।
गढ़ गोपुर खाई गृहपांति । घनबनसौं सोहै बहुभांति ।।३।।
ऊँचे जिनमंदिर मनहरैं । कंचन कलस धुजा फरहरैं ।।
वज्रबाहु भूपति तिहिं थान । वर-इख्वाकवंस-नभ-भान।।४।।
जैनधर्म पालै बड़भाग । जिनपद-कमलनि मधुप[3] सराग ।।
प्रभाकरी तिय ताघर सती । जीती जिन रंभा-रति-रती ।।५।।

दोहा ।

यथा हंसके वंसकौं, चाल न सिखवै कोय ।
त्यौं कुलीन नर-नारिकै, सहज नमन-गुण होय ।।६।।

१ बाल, युवा और वृद्धपन २ मरुस्थल ३ भौंरा ।

चोपई।

वह अहमिंद्र तहातैं चयौ[१]। तिनकैं सुदिन पुत्र सो भयौ ॥
नांव धरयौ आनंदकुमार। अतुल तेज सब लच्छन सार ॥७
सुभग सोम श्रीवंत[२] महान। बल-बीरज-धीरजगुनथान ।।
नरनारी-मन-मानिक-चोर। देखत नयन रहैं जा ओर ॥८॥
जाके सुगुन सेस कह थकैं। और कौन बरनन कर सकैं ॥
जोबनवंत जनक तिस देख। ब्याहमहोत्सव कियौ विसेख ॥९
परनी राजसुता बहु भाय। जिनकी छवि बरनी नहिं जाय ॥
क्रमसौं कुमर पितापद पाय। बलसौं बस कीये बहुराय[३] ॥१०

दोहा।

जोबन वय[४] संपति बड़ी, मिल्यौ सकल सुखजोग।
'महामंडली' पद लह्यौ, पूरब-पुन्य-नियोग ॥१

चोपाई।

अब सुन आठ जातिके भूप। जिनकी जिनमत कह्यौ सरूप।
कोटि ग्रामको अधिपति होय। राजा नाम कहावै सोय ॥
नवैं[५] पांचसौ राजा जाहि। अधिराजा नृप कहिये ताहि ॥
सहस राय जिस मानैं आन। महाराज राजा वह जान ॥१३
दोय सहस नृप नवैं असेस। मंडलीक वह अर्ध नरेस ॥
चार सहस जिस पूजैं पाय। सोई मंडलीक नरराय ॥१४
आठ सहस भूपतिको ईस। मंडलीक सो महा महीस ॥
सोलह सहस नवैं भूपाल। सो अधचक्री पुन्यविसाल ॥१५

१ उतरा २ लक्ष्मीवान ३ बहुत से राजा ४ छत्र ५ शिर झुकाते हैं।

सहस बतीस आन जिस वहैं। ताहि सकलचक्री बुध कहैं ॥
इनमैं श्रीआनंदनरेस। महामंडली पद परमेस ॥१६॥

सोरठा।

आठ सहस सुखहेत, नृप नछत्र सेवैं सदा।
कीरति-किरन-समेत, सोहै नरपतिचंद्रमा ॥१७॥

चौपई।

एक दिना आनंद महीस। बैठ्यौ सभा सिंहासनसीस ॥
मंत्री तहां स्वामिहित नाम। कहै विवेकी सुवचन ताम ॥१८॥
स्वामी यह बसंत रितुराज। सब जन करैं महोच्छवकाज ॥
नंदीसुर-व्रत अवसर येह। करिये प्रभु-पूजा जिन गेह ॥१९॥
पूजा सदा पाप निरदलै[1]। पर्वसंजोग महाफल फलै ॥
परम पुन्यको कारन आन। नहीं जगतमैं जग्यसमान[2] ॥२०॥

दोहा।

जिनपूजा की भावना, सब दुखहरन-उपाय।
करते जो फल संपजै[3], सो बरन्यौ किमि जाय॥२१॥

चौपई।

सुनि राजा मंत्री उपदेस। नगर महोच्छव कियौ विसेस ॥
करि सनान जिनमंदिर जाय। जैनबिंब पूजे विहसाय ॥२२॥
बहुविध पूजा दरब मनोग। धरे आन जिनपूजनजोग ॥
भावभक्तिसौं मंगल ठयो। राजाके मन संसय भयौ ॥२३॥

---

१. नष्ट करे २. पूजा के समान, ३. उत्पन्न करे।

विपुलमती मुनिवर तिहिं थान । दरसन कारन आये जान ।।
तिनें पूजि नृप पूछै येह । भो मुनींद्र मुझ मन संदेह ।।२४।।

दोहा ।

प्रतिमा धात पखानकी, प्रगट अचेतन अंग ।
पूजक जनकौं पुन्यफल, क्यों कर देय अभंग[1] ।।२५।।
तुम जगमैं संसय-तिमिर-दूरकरन रविरूप ।
यह मुझ भरम मिटाइये, करै बीनती भूप ।।२६।।
तब ग्यानी गनधर कहैं, समाधान सुन राय ।
भवि-जनकौं-प्रतिमा भगति, महापुन्य-फलदाय ।।२७।।
भाव सुभासुभ जीवके, उपजै कारन पाय ।
पुन्य पाप तिनसौं बंधै, यों भाख्यौ जिनराय ।।२८।।
कुसुम[2] बरन कौ जोग लहि, जैसे फटिक[3] पखान ।
अरुनस्याम दुतिकौं धरै, यही जीवकी बान[4] ।।२९।।
सो कारन है दोय बिध, अतरंग बहिरंग ।।
तिनके ही उर आय है, जे समझै सरवंग[5] ।।३०।।
बाहिज कारन जानियौ, अंतरंगकौ हेत ।
सोई अंतरभाव नित, कर्मबंधकौं देत ।।३१।।
जिन परिनामन पुन्य बहु, बधै अन्यथा नाहिं ।
तिन भावनकौं निमित है, जिनप्रतिमा जगमाहिं ।।३२।।

---

१. पुरा २ फूल ३ स्फटिकमणि ४ आदत ५ पूर्णतया ।

वीतरागमुद्रा निरखि, सुधि[1] आवै भगवान ।
वही भाव कारन महा, पुन्यबंधको जान ।।३३।।
रागद्वेषवर्जित अमल[2], सुखदुखदाता नांहि ।
दर्पनवत भगवान हैं, यह आनौं उरमांहि ।।३४।।
तिनको चिंतन ध्यान जप, थुति पूजाविविधान ।।
सुफल फलै निज भावसौं, ह्वै मुकती सुखदान ।।३५।।
जैसे गुन प्रभुके कहे, ते जिन मुद्रामांहि ।
थिरसरूप रागादिबिन, भूषन आयुध नांहि ।।३६।।
जद्यपि सिल्पीकृत कृतम, जिनवरबिम्ब अचेत ।
तदपि सही अंतरविषै, सुभभावनकौं हेत ।।३७।।
और एक दिष्टांत[3] अब, सुन अवनीपति[4] सोय ।
जियके उर दृष्टांतसौं, संसै रहै न कोय ।।३८।।

चौपई ।

गनिका[5] धरी चितामैं जाय । बिसनी पुरुष देखि पछताय ।।
जो जीवत मुझ मिलतौ जोग । तो मैं करतो वांछित भोग ।।
स्वान[6] कहै उर क्यों यह दही[7]। मैं निज भच्छन करतौ सही।।
पुनि तिहि देख कहैं मुनिराय । क्यों न कियौ तप यह तन पाय।।
इहिबिध देखि अचेतन अंग । उपजै भाव पाय परसंग[8]।।
तिन ही भावनके अनुसार । लाग्यौ फल तिनकौं तिहि बार।।

---

१ याद २ निर्मल ३ दृष्टान्त ४ राजा ५ वेश्या ६ कुत्ता ७ जली
८ निमित्त ।

दोहा ।

व्यसनी नर नरकहि गयो, लह्यो भूखदुख स्वान ।।
साधु सुरग पहुँचे सही, भावनको फल जान ।।४२।।

चौपई ।

यों जिनबिंब अचेतनरूप । सुखदायक तुम जानो भूप ।।
कारनसम कारज संपजै[1] । यामैं बुध[2] संसै नहि भजै ।।४३।।

दोहा ।

जैसै चिंतामनि रतन, मनवांछितदातार ।
तथा अचेतन बिंब यह, बांछापूरनहार ।।४४।।
ज्यों जांचत सुख कलपतरु, दानी जनकौं देय ।।
त्यों अचेत यह देत है, पूजककौं सुख श्रेय ।।४५।।
मनिमंत्रादिक औषधी, हैं प्रतच्छ जड़रूप ।
विषरोगादिककौं हरं, त्यों यह अघहर भूप ।।४६।।
जड़सरूपको पूज पद, प्रगट देखिये लोय[3] ।।
राजपत्र[4] सिर धारिये, मुद्रा[5] अंकित होय ।।४७।।
राजपत्र सिर धारिये, राजाको भय मानि ।
जिनवरमुद्रा पूजिये, पातककौं[6] डर जानि ।।४८ ।
प्रतिमापूजन चिंतवन, दरसनआदि विधान ।
हैं प्रमान तिहुं कालमैं, तीन लोकमैं जान ।।४६।।
जे प्रतिमा पूजै नहीं, निंदा करै अजान ।
तीन लोक तिहुंकालमैं, तिनसम अधम[7] न आन[8] ।।५०।।

१ बने २ बुद्धिमान ३ लोक ४ राजा का फरमान ५ म्होर लगी हुई ६ पाप ७ नीच ८ दूसरा ।

जे प्रतिमा पूजै सदा, भावभगति-विधि-सुद्धि ।
तिनकी जनम सराहिये, धन तिनकी सद्बुद्धि ।।५१।।
इत्यादिक उपदेस सुनि, आई उर परतीत[1] ।
जिनप्रतिमापूजनविषै, धरी राय दिढ़ प्रीत ।।५२।।

चौपई ।

तिस औसर[2] मुनि बरनै ताम । तीनभवनवरती जिनधाम।।
भानुविमानविषै जिनगेह । सो पहले बरनै धरि नेह ।।५३।।
रतनमई प्रतिमा जगमगै । कोटभानुछबि[3] छीनो[4] लगै ।।
निरुपम रचना विविध विसाल । सूरजदेव नमैं तिहुँ काल।५४।
सुन आनंदो[5] आनँदराय । विकसत आनन[6] अंग न माय ।।
जब संदेहसल्य निरबरै[7] । तब अवस्य उर सुख विस्तरै ।५५।
प्रात सांझ मंदिर चढ़ि सोय । अर्घ देय रविसम्मुख होय ।।
करि जिनबिंबनको मन ध्यान । अस्तुति करै राग मन आन ।।
रविविमान मनिकंचनमई । निरमापो अद्भुत छबि छई ।।
जैनभवनकरि मंडित सोय । देखत जनमन अचरज होय ।।५७।।
पूजा तहां करै नित राय । महा महोच्छव हर्ष बढ़ाय ।।
प्रतिदिन देय दया उर आन । दीन दुखित जनकौं बहु दान ।५८।
यह नितनेम करै भूपाल । चली नगरमैं सोई चाल ।।
सब सूरजकौं करैं प्रनाम । देखादेखि चल्यो मत ताम ।५९।।

१ विश्वास २ समय ३ करोड़ सूर्य की शोभा ४ फीकी ५ प्रसन्न हुआ ६ मुख ७ नष्ट होवे ।

समझैं नहीं मूढ़ परनये । भानुउपासक तबसौं भये ।।
जो महंत[1] नर कारज करै । ताकी रीत जगत आचरै ।।६०।।
यों बहु पुन्य करै भूपाल । सुखमैं जात न जान्यौ काल ।।
एक दिना निजसभा नरेस । निवसै[2] मानौं सुरगसुरेस ।।६१।।
धवल[3] केस देख्यौ निज सीस । मन कंप्यो सोचै नरईस ।।
जाहि देखि मनउत्सव घटै । कामी जीवनकौ उर फटै।।६२।।
सो लखि सेत[4] बाल भूपाल । भोगउदास भये ततकाल ।।
जगतरीति सब अथिर असार । चिंतै चितमैं मोह निवार ।६३।
बाल अवस्था भई बितीत । तरुनाई आई निज रीत ।।
सो अब बीती जरा[5] बसाय । मरन दिवस यों पहुंचै आय ।६४।
बालक काया कूंपल सोय । पत्ररूप जोबनमैं होय ।।
पाको पात[6] जरा तन करै । काल बयारि[7] चलत झर[8] परै।।
कोई गर्भमांहि खिर जाय । कोई जनमत छोड़ै काय ।।
कोई बाल दसा धरि मरै । तरुन अवस्था तन परिहरै ।।६६।।
मरन दिवसको नेम न कोय । यातैं कछु सुधि परै न लोय ।।
एक नेम यह तो परमान । जन्म धरै सो मरै निदान[9] ।।६७।।
महापुरुष उपजे बड़भागि । सब परलोक गये तन त्यागि ।।
संसारी जन अपनी बार । पूरबउदै करै अनुसार ।।६८।।
परवत[10] पतित नदीके न्याय[11] छिनही छिन थिति[12] बीती जाय।
रागअंधप्रानी जगमांहि । भोगमगन कछु सोचै नाहिं ।।६९।।

---

१ बड़े २ बसे ३ सफेद ४ सफेद ५ बुढ़ापा ६ पत्ता ७ हवा ८ झड़पड़े ९ आखिर
१०. पहाड़ से गिरने वाली ११. तरह १२. स्थिति ।

अंतकाल जब पहुँचै आय। कहा होय जो तब पछताय ।।
पानी पहले बंधै जो पाल। वही काम आवै जल-काल ।७०।
यही जान आतमहितहेत। करै विलंब[1] न संत सुचेत ।
आज काल जे करत रहांहि। ते अजान पीछे पछतांहि ।७१।
रात दिवस घटमाल[2] सुभाव। भरि भरि जलजीवनकी आव।
सूरज चांद बैल ये दोय। काल रँहट नित फेरैं सोय ।।७२।।

दोहा।

राजा राना छत्रपति, हाथिन के असवार।
मरना सबकों एक दिन, अपनी अपनी बार ।।७३।।
दलबल[3] देई देवता, मात पिता परिवार।
मरती विरिया[4] जीवकौं, कोउ न राखनहार ।।७४।।
दामबिना निर्धन दुखी, तिसनावस धनवान।
कहूं न सुख संसारमैं, सब जग देख्यौ छान ।।७५।।
आप अकेला अवतरै[5], मरै अकेला होय।
यों कबही इस जीवका, साथी सगा न कोय ।।७६।।
जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपनो कोय।
परसम्पति पर प्रगट ये, पर हैं परिजन लोय ।।७७।।
दिपै[6] चाम[7]-चादर-मढी, हाड़ पींजरा देह।
भीतर या सम जगतमैं, और नहीं घिनगेह[8] ।७८।।

---

१ देर २. अरहट के घड़ों की माला ३, सेना की शक्ति ४. समय ५. पैदा हो ६. चमकै ७ चमड़ा ८. घृणा का स्थान।

सोरठा

मोहनींद के जोर, जगवासी घूमैं सदा ।
कर्मचोर चहुँ ओर, सरवस लूटैं सुधि नहीं ।।७९।।
सतगुरु देहिं जगाय, मोहनींद जब उपसमै[1] ।
तब कछु बनैं उपाय, कर्मचोर आवत रुकैं ।।८०।।

दोहा ।

ग्यान दीप तप तेल भरि, घर सोधैं[2] भ्रम छोर ।
याबिध बिन निकसैं नहीं, पैठे[3] पूरब चोर ।।८१।।
पंचमहाव्रत-संचरन, समिति पंच परकार ।
प्रबलपंच इंद्रीविजय, धार निर्जरा सार ।।८२।।
चौदह राजु[4] उतंग[5] नभ, लोक पुरुषसंठान[6] ।
तामैं जीव अनादिसौं, भरमत है बिन ग्यान ।।८३।।
जांचें[7] सुरतरु[8] देहिं सुख, चिंतत चिंतारैन ।
बिन जांचें बिन चिंतवें, धर्म सकल सुख-दैन ।।८४।।
धन-कन-कंचन-राजसुख, सबै सुलभ करि जान ।
दुर्लभ है संसारमैं, एक जथारथ[9] ग्यान ।।८५।।

चौपई ।

इहिबिध भूप भावना भाय । हित उद्यम चित्यौं मन लाय ।।
सबसौं मोह ममत निरवारि । उठ्यौ धीर धीरज उर धारि ८६
जेठे[10] सुतकौं दीनौं राज । आप चल्यौ सिवसाधनकाज ।।

१, शान्त हो २. खोजे ३. घुसे ४. एक नाप ५. ऊंचा ६. पुरुष के आकार ७. मांगने पर ८. कल्पवृक्ष ९. यथार्थ-सम्यक् १० बड़े ।

सागरदत्त मुनीसुरपास । संजम लियौ तजी जगग्रास ।।८७

धर्नं भूप भूपतिके संग । धरे महाव्रत निर्भय अंग ।।

अब आनन्द महामुनि धीर । बननिवास विचरैं बन बीर ।८

दुद्धर[1] तप बारह बिध करैं । दुबिध संग-ममता परिहरैं ।।

तिनके नाम कहूं कछु धार । जिनसासन जिनकौ विस्तार ।

प्रथम महातप अनसन[2] नाम । दूजौ ऊनोदर[3] गुनधाम ।

तीजौ है व्रतपरिसंख्यान । रसपरित्याग चतुर्थम मान ।।६

पंचम भिन-सयनासन सार । कायकलेस छठौ अविकार ।।

यह षटबिध बाहज तप जान । अब अन्तर तप सुनौ सुज्ञान ।

पहले प्राछित[4] विनय दुतीय । वैयाव्रत तीजौ गन लीय ।।

चौथौ अन्तरंग सिज्झाय[5] । पंचम तप व्युत्सर्ग बताय ।।६

षष्ठम ध्यान हरैं सब खेद । ये अन्तरतप के सब भेद ।।

अब इनकौ संक्षेप सरूप । सुनौ संत तजि भाव विरूप ।।६३

जिनके सुनत बंधं सुभध्यान । सेवत पद लहिये निरवान ।।

तप बिन तीनकाल तिहुं लोय । कर्मनास कबहो नाहि होय।६

दिनसौं लेय बरस लगि करैं । चार प्रकार असन परिहरैं ।

राग-रोग-निर्दलन उपाय । सो अनसन भाख्यौ जिनराय ।६

पौन अर्ध चौथाई टेक । एक ग्रास अथवा कन एक ।।

ऐसी बिध जो भोजन लेत । ऊनोदर आलस हर लेत ।।६

जैसी प्रथम प्रतिग्या करैं । ताही बिध भोजन आदरैं ।।

---

१. घोर २. उपवास ३. भूख से कम खाना ४. प्रायश्चित ५. स्वाध्याय ।

सो कहिये व्रतपरिसंख्यान । आसाव्याधि-विनासन जान ।९७।
लवनादिक रस छांरि उपाध । नीरसभोजन भुंजै साध ।।
रसपरित्याग कहावै एम । इंद्रियमदनासन यह नेम ।।९८।।
सून्यगेह गिरि गुफा मसान । नारि-नपुंसक-वर्जित थान ।।
बसै भिन्न-सयनासन सोय । यासौं सिद्धि ध्यानकी होय ।९९।
ग्रीषमकाल बसै गिरि-सीस । पावसमैं तरुवरतल दीस ।।
सीतसमय तटिनीतट[1] रहै । काय कलेस कहावै यहै ।।१००।।

दोहा ।

या तपके आचरनसौं, सहनसील मुनि होय ।
अब अन्तर-तप-भेद छह, कहूं जिनागम जोय ।।१०१।।

चौपई ।

जो प्रमादवस लागै दोष । सोधै ताहि छोरि छल रोष ।।
आचारजवानी अनुसार । यही प्रथम प्राछित तप सार ।१०२।
जे गुनजेठे[2] साधु महंत । दरसन ग्यानी चारितवंत ।।
तिनकी विनय करै मनलाय । विनय नाम तपसो सुखदाय १०३
रोगादिक पीड़ित अविलोय[3] । बाल बिरध मुनिवर जो होय
सेव करै निजसंजम राखि । सो वैयाव्रत आगमसाखि ।१०४।
सकतिसमान सकल गुन ठाठ । करै साधु परमागमपाठ ।।
परमोत्तम तप सो सिज्झाय । जासौं सब संसय मिटजाय१०५
निजसरीरममता परिहरै । काउसग्गमुद्रा दिढ धरै ।।
अन्तर बाहर परिग्रह छार । सोई तप व्युत्सर्ग उदार ।।१०६।।

---

१. नदी के किनारे २, बड़े ३. अवलोकन करे ।

आरत रौद्र निवारैं सोय । धर्म सकल ध्यावैं थिर होय ।।
जहां सकल चिंता मिट जांहि । वही ध्यानतप जिनमतमांहि१०

दोहा ।

यह बारह बिध तप विषम[1], तपैं महामुनि धीर ।।
सहैं परीषह बीस दो, ते अब वरनौं बीर ।।१०८।।

छप्पय

क्षुधा तृषा हिम उसन, डंस मंसक[2] दुखभारी ।
निरावरन तन अरति, खेद उपजावन नारी ।।
चरिया आसन सयन, दुष्ट वायक[3] वध बंधन ।
जांचैं नहीं अलाभ रोग, तिन-फरस निबंधन[4] ।।
मलजनित मान-सनमानवस, प्रग्या[5] और अग्यान कर
दरसन मलीन बाईस सब, साधुपरीषह जान नर ।१०

दोहा

सूत्रपाठ अनुसार ये, कहे परीषह नाम ।।
इनके दुख जे मुनि सहैं, तिनप्रति सदा प्रनाम ।।११०।

सोमावती छन्द

अनसन ऊनोदर तप पोषत, पाखमास दिन बीत गये हैं ।
जोग न बनैं जोग भिच्छाविधि, सूख अंग सब सिथिल भये हैं
तब बहु दुसह भूखकी वेदन, सहत साधु नहिं नेक नये हैं ।
तिनके चरनकमल प्रति दिन दिन, हाथ जोरि हम सीस ठये हैं
पराधीन मुनिवरकी भिच्छा, परघर लेहिं कहैं कछु नाहीं ।

१. बहुत कठिन २. मच्छर ३. वचन ४. कारण ५. बुद्धि ।

प्रकृति-विरोधि पारना भुंजत, बढ़त प्यासकी त्रास तहांहीं ।
ग्रीषमकाल पित्त अति कोपै, लोचन दोय फिरे जब जाहीं ।
नीर न चहैं सहैं ऐसे मुनि, जयवंते बरतौ जगमाहीं ।।११२।।
सीतकाल सबही जन कांपै, खड़े जहां बन बिरछ[1] डहै हैं ।
झंझा बायु बहै बरसा रित, बरसत बादल झूमरहे हैं ।।
तहां धीर तटिनीतट[2] चौवट, ताल-पालपै[3] कर्म दहै हैं ।
सहैं संभाल सीतकी बाधा, ते मुनि तारनतरन कहे हैं ।११३।
भूख प्यास पीडैं[4] उर अंतर, प्रजलै[5] आंत देह सब दागैं[6] ।
अगनिसरूप धूप ग्रीषमकी, ताती बाल[7] झालसी[8] लागै ।।
तपै पहार ताप तन उपजै, कोपै पित्त दाहजुर जागै ।
इत्यादिक ग्रीषमको बाधा, सहत साधु धीरज नहिं त्यागै ।।
डांस मांस माखी तन काटैं, पीड़ैं बनपछी बहुतेरे ।
डसैं ब्याल[9] विषयाले बीछू, लगैं खजूरे[10] आन घनेरे ।।
सिंह स्याल सुंडाल[11] सतावैं, रीछ रोझ दुख देंहि बड़ेरे ।
ऐसे कष्ट सहैं समभावन, ते मुनिराज हरौ अघ मेरे ।।११५।।
अंतर विषय-वासना बरतैं, बाहर लोकलाजभय भारी ।
तातैं परम दिगंबरमुद्रा, धर नहिं सकैं दीन संसारी ।।
ऐसी दुद्धर नगन परीषह, जीतैं साधु सीलव्रतधारी ।
निर्विकार बालकवत निर्भय, तिनके पायन ढोक हमारी ।।११६

१ वृक्ष २. नदी किनारे ३. तालाब के किनारे ४ दुःख दे ५ जलै ६. झुलसे ७. गरम हवा ८. तीक्ष्ण ९. सर्प १०. कंछले ११ हाथी ।

देश कालको कारन लहिकैं, होत अचैन[1] अनेक प्रकारैं ।
तब तहां खिन्न होहि जगवासी कलमलाय थिरतापद छारैं ।।
ऐसी अरति परीषह उपजत, तहां धीर धीरज उर धारैं ।
ऐसे साधनको उर अंतर, बसौं निरंतर नाम हमारैं ।।११७।।
जे प्रधान केहरिकौं[2] पकरैं, पन्नग[3] पकरि पांवसौं चंपत[4] ।
जिनकी तनक देखि भौं बांकी, कोटिक सूर दीनता जंपत ।।
ऐसो पुरुष-पहार-उड़ावन,-प्रलय-पवन तिय[5]-वेद पयंपत[6] ।
धन्य-धन्य ते साधु साहसी, मनसुमेरु जिनको नहिं कंपत ।११८।
चारहाथ परवान निरखि पथ, चलत दिष्ट इत उत नहिं तानैं
कोमल पांय कठिन धरती पर, धरत धीर बाधा नहिं मानैं ।।
नाग[7] तुरंग[8] पालकी चढ़ते, ते सवाद[9] उर यादि न आनैं ।
यों मुनिराज भरैं चर्यादुख, तब दिढकर्म कुलाचल[10] भानैं ।।
गुफा मसान सैल[11] तरु[12]-कोटर, निवसैं जहां सुद्धि भू हेरैं ।
परिमित काल रहैं निहचल तन, बारबार आसन नहिं फेरैं ।।
मानुष देव अचेतन पसुकृत, बैठे विपत आन जब घेरैं ।
ठौर न तजैं भजैं थिरता पद, ते गुरु सदा बसौ उर मेरैं ।१२०।
जे महान सोनेके महलन, सुन्दरसेज सोय सुख जोवैं ।
ते अब अचलअंग एकासन, कोमल कठिन भूमिपर सोवैं ।।
पाहन-खंड कठोर कांकरी, गड़त कोर कायर नहिं होवैं ।
ऐसी सयन-परीषह जीतत, ते मुनि कर्मकालिमा धोवैं ।१२१।

१. दुखी २. सिंह ३. सांप ४. कुचले ५. स्त्री वेद ६ प्रकंपत=कंपित ७. हाथी ८. घोड़ा ९. आनन्द १०. पहाड़ ११. पर्वत १२. वृक्षका खोखला भाग

जगत जीव जावंत[1] चराचर, सबके हित सबके सुखदानी ।
तिनें देख दुर्वचन कहैं दुठ, पाखंडी ठग यह अभिमानी ।।
मारौ याहि पकरि पापीकौं, तपसी-भेष चोर है छानी[2] ।
ऐसें वचनबाणकी वर्षा, छिमाढाल ओढं मुनिग्यानी ।।१२२।।
निरपराध निर्बैर महा मुनि, तिनकौं दुष्टलोग मिलि मारें ।
केई खैंच थंभसौं बांधत, केई पावकमैं[3] परजारें ।।
तहां कोप नहिं करहिं कदाचित, पूरबकर्मविपाक[4] विचारें ।
समरथ होय सहैं बध बंधन, ते गुरु सदा सहाय हमारें ।१२३।
घोर वोर तप करत तपोधन, भयौ खीन सूखो गल बाहीं ।
अस्थि[5] चाम अवसेस रह्यो तन, नसाजाल झलक्यौ जिसमाहीं ।
ओषधि असन[6] पान इत्यादिक, प्रान जाय पर जांचत नाहीं ।
दुद्धर अजाचीक[7] व्रत धारें, करहिं न मलिन धरमपरछाहीं ।।
एक बार भोजनकी बिरियां, मौन साधि बसती[8] मैं आवें ।
जो नहिं बनै जोग भिच्छाबिधि, तौ महंत मन खेद न लावें ।
ऐसे भ्रमत बहुत दिन बीतें, तब तप बिरद भावना भावें ।
यौं अलाभकी परम परीषह, सहैं साधु सोई सिव पावें ।।१२५।।
बात पित कफ सोनित[9] चारौं, ये जब घटें बढ़ें तनमाहैं ।
रोगसंजोग सोग तन उपजत, जगत जीव कायर हो जाहैं ।।
ऐसी व्याधि वेदना दारुन[10], सहैं सूर उपचार न चाहैं ।
आतम-लीन देहसौं विरकत, जैन जती निज नेम निबाहैं ।१२६।

१. जितने २ छिपा हुआ ३. अग्नि में ४. फल ५. हड्डी ६. भोजन ७. नहीं मांगना ८. नगर-गांव ९. खून १० कठोर ।

सूखे तिन अरु तीखन कांटे, कठिन कांकरी पांय बिदारैं।
रज उड़ि आय परैं लोचनमैं, तीर फांस तन पीर विथारैं।।
तापर पर सहाय नहिं वांछत, अपने करसौं काढ़ न डारैं।
यौं तिन-परस-परीषहविजई, ते गुरु भवभव सरन हमारैं।१२७।
जावजीव[1] जलन्हौन तज्यौ जिन, नगनरूप बनथान खरे हैं।
चलै पसेव धूपकी बिरियां, उड़त धूल सब अंग भरे हैं।।
मलिन देहकौं देखि महामुनि, मलिन भाव उर नाहिं करे हैं।
यौं मलजनित परीषह जीतैं, तिनैं हाथ हम सीस धरे हैं।१२८।
जे महान विद्यानिधि विजई, चिरतपसी[2] गुन अतुल भरे हैं।
तिनकी विनय वचनसौं अथवा, उठि प्रनाम जन नाहिं करे हैं।।
तौ मुनि तहां खेद नहिं मानैं, उर मलीनता भाव हरे हैं।।
ऐसे परमसाधुके अहनिसि[3], हाथ जोरि हम पांय परे हैं।१२९।
तर्क छन्द व्याकरन कलानिधि, आगम अलंकार पढ़ जानैं।
जाकी सुमति देखि परवादी, बिलखे हौंहि लाज उर आनैं।।
जैसै नाद[4] सुनत केहरिकी[5], बनगयन्द[6] भागत भय मानैं।
ऐसी महाबुद्धिके भाजन, पै मुनीस मद रंच न ठानैं।।१३०।।
सावधान बरतैं निसिवासर, संजमसूर परमवैरागी।
पालत गुपति गये दीरघ दिन, सकल संग-ममतापरित्यागी।।
अवधिग्यान अथवा मनपरजय, केवलकिरन अजौं नहिं जागी।
यौं विकलप नहिं करहिं तपोधन, सो अग्यानविजई बड़भागी।

१. यावज्जीव २. चिरकाल के साधु ३. रात दिन ४. आवाज ५. सिंहकी ६. बन का हाथी।

मैं चिर काल घोर तप कीनौं, अजौं, रिद्धि-अतिसय नहिं जागै।
तपबल सिद्ध होंहि सब सुनिये, सो कछु बात झूठसी लागै ।।
यों कदापि चितमैं नहिं चिंतत, समकित-सुद्ध-सांतरसपागे।
सोई साधु अदर्सनविजई, ताके दरसनसौं अघ भागे ।।१३२।।

कवित्त इकत्तीसा

ग्यानावरणीसौं दोय प्रग्या अग्यान होय,
एक महामोहतैं अदरस बखानिये।
अंतरायकर्मसेती उपजै अलाभ दुख,
सपत चारित्रमोहनी के बल जानिये ।।
नगन निषिद्या नारि मान सनमान गारि[1],
जांचना अरति सब ग्यारै ठीक ठानिये।
एकादस बाकी रहीं वेदनी उदैसौं कहीं,
बाइस परीषा उदै, ऐसे उर आनिये ।।१३३।।

अडिल्ल छंद।

एक बार इनमाहिं, एक मुनिकै कही।
सब उनीस उतकृष्ट, उदय आवै सही ।।
आसन सयन विहार, दोय इनमाहिंकी।
सीत उसनमैं एक, तीन ये नाहिंकी ।।१३४।।

दोहा—अब दसलच्छन धर्मके, कहूं मूल दस अंग।
जे नित श्रीआनन्द मुनि, पालत हैं सरवंग ।।१३५।।

---

१. आक्रोष।

चौपाई ।

बिनादोष दुर्जन दुख देय । समरथ होय सकल सह लेय ।।
क्रोध कषाय न उपजै जहां । उत्तम छिमा कहावै तहां ।१३६।
आठ महामद पाय अनूप । निरभिमान बरतै मृदु[1] रूप ।।
मानकषाय जहां नहि होय । मार्दव[2] नाम धरम है सोय।१३७।
जो मनचितै सो मुख कहै । करै कायसौं कारज वहै ।।
मायाचार न उर पाइये । आर्जव[3] धर्म यही गाइये ।।१३८।।
बोलै वचन स्वपरहितकार । सत्यस्वरूप सुधा-उनहार ।।
मिथ्यावचन कहै नहि भूल । सोई सत्य धर्मतरुमूल ।।१३९।।
पर-कामिनि पर-दरबमझार । जो विरक्त बरतै छल छार ।।
अंतर सुद्ध होय सरवंग । सोई सौच[4] धर्मको अंग ।।१४०।।
मन समेत जो इंद्री पंच । इनकौं सिथिल करै नहिं रंच ।।
त्रस थावरकी रच्छा जोय । संजम धर्म बखान्यौ सोय ।१४१।
ख्याति लाभ पूजा सब छंड । पंच करन[5] कौं दीजै दंड ।।
सो तपधर्म कह्यौ जगसार । अनसनादि बारह परकार।।१४२।।
संजमधारी व्रती प्रधान । दीजै चउविध उत्तम दान ।।
तथा दुष्टविकलप परिहार । त्यागधर्म बहु सुखदातार।१४३।
बाहिज परिग्रहकौं परित्याग । अंतर ममता रहै न लाग ।।
आकिंचन यह धर्म महान । सिवपददायक निहचै जान।१४४।
बड़ी नारि जननी सम जान । लघु पुत्री सम बहिन बखान ।।
तजि विकार मन बरतै जेह । ब्रह्मचर्य परिपूरन एह ।।१४५।।

१. कोमल २. मद न करना ३. निष्कपट ४. लोभ रहितपना ५. इन्द्रियां ।

दोहा।

सोलह कारन भावना, भावैं मुनि आनंद।
तिनको नाम सरूप कछु, लिखौ सकल सुखकंद ॥१४६॥

चौपई।

आठ दोष मद आठ मलीन। छै अनायतन सठता[1] तीन॥
ये पचीस मलवरजित होय। दर्सनसुद्धि कहावै सोय ॥१४७॥
रत्नत्रयधारी मुनिराय। दर्सनग्यानचरितसमुदाय॥
इनकी विनयविषैं परवीन। दुतियभावना सो अमलीन।१४८।
सीलभार धारैं समचेत। सहस अठारह अंग समेत॥
अतीचार नहिं लागै जहां। तृतिय भावना कहिये तहां।१४९।
आगमकथित अर्थ अवधार। जथासकति निजबुधि अनुसार॥
करैं निरंतर ज्ञान अभ्यास। तुरिय[2] भावना कहिये तास।१५०

दोहा।

धर्म धर्मके फलविषैं, बरतैं प्रीति विसेख।
यही भावना पंचमी, लिखी जिनागम देख॥ १५१॥

चौपई।

औषधि अभय ग्यान आहार। महादान यह चार प्रकार॥
सक्तिसमान सदा निरवहै[3]। छठी भावनाधारक वहै॥१५२॥
अनसन आदि मुकतिदातार। उत्तम तप बारह परकार॥
बल अनुसार करैं जो कोय। सो सातमी भावना होय॥
जती-[4]वर्गकौं कारन पाय। विघन होत जो करैं सहाय॥

१. मूढ़ता २. चौथी ३. पालन करे ४. साधु।

साधुसमाधि कहावै सोय। यही भावना अष्टम होय॥१५४॥
दसबिध साधु जिनागम कहे। पथ[1]पीड़ित रोगादिक गहे॥
तिनकी जो सेवा सतकार। यही भावना नौमी सार।१५५।
परमपूज्य आतम अरहंत। अतुल अनंत चतुष्टयवंत॥
तिनकी थुति नति[2] पूजा भाव। दसम भावना भवजल-नाव।
जिनवरकथित अर्थ अवधार। रचना करै अनेक प्रकार॥
आचारजकी भक्तिविधान। एकादसम भावना जान।१५७।
विद्यादायक विद्यालीन। गुणगरिष्ठ पाठक[3] परवीन॥
तिनके चरन सदा चित रहै। बहुश्रुतिभक्ति बारमी यहै।१५८।
भगवतभाषित अर्थ अनूप। गनधरग्रंथित ग्रंथसरूप॥
तहां भक्ति बरतै अमलान। प्रवचनभक्ति तेरमी जान।१५९।
षट आवश्यक क्रिया विधान। तिनकी कबही करै न हान॥
सावधान बरतै थिरचित्त। सो चौदहमी परमपवित्त।१६०।
करि जप तप पूजा व्रत भाव। प्रगट करै जिनधर्मप्रभाव॥
सोई मारग परभावना। यहै पंचदसमी भावना॥१६१॥
चार प्रकार संघसौं प्रीति। राखै गाय-बच्छकी रीति॥
यही सोलमी सबसुखदाय। प्रवचनवात्सल्य अभिधाय[4]।१६२।

दोहा

सोलहकारन भावना, परम पुन्यकौ खेत।
भिन्न भिन्न अरु सोलहों, तीर्थंकरपद हेत॥१६४॥
बंधप्रकृति जिनमतविषैं, कही एकसौ बीस।

---

१. थके हुए २. नमस्कार ३. उपाध्याय ४. नाम।

सौ सत्रह मिथ्यातमैं, बांधत है निसदोस ।।१६४।।
तीर्थंकर आहार[1]-दुक, तीन प्रकृति ये जान ।।
इनको बंध मिथ्यातमैं, कह्यौ नहीं भगवान ।।१६५।।
तातैं तीर्थंकर प्रकृति, तीनौं समकितमांहि ।।
सोलह कारनसौं बंधै, सबकौ निहचै नांहि । १६६।।

सोरठा ।

पूज्यपाद मुनिराय, श्रीसरवारथसिद्धि मैं ।
कह्यौ कथन इहि भाय, देखि लीजियो सुबुधिजन ।१६७।

कुसुमलता

सोलह कारन ये भवतारन, सुमरत पावन होय हियौ ।
भावैं श्रीआनन्दमहामुनि, तीर्थंकरपदबंध कियौ ।।१६८।।
काय कषाय करी कृस[2] अति ही, सत संजम गुण पोढ[3] कियौ ।
तपबल नाना रिद्धि उपन्नी, राग विरोध निवार दियौ ।।
जिस बन जोग धरैं जोगेसर, तिस बनकी सब विपत टलैं ।
पानी भरहिं सरोवर सूखे, सब रितुके फलफूल फलैं ।१७०।
सिंहादिक जे जातविरोधी, ते सब बैरी बैर तजैं ।
हंस भुजंगम मोर मंजारी[4], आपसमैं मिलि प्रीति भजैं ।१७१।
सोहैं साधु चढ़े समतारथ, परमारथ पथ गमन करैं ।
सिवपुर पहुंचनकी उर वांछा, और न कछु चित चाह धरैं ।।
देहविरक्त ममत्तबिना मुनि, सबसौं मैत्री भाव बहैं ।
आतमलीन अदीन[5] अनाकुल, गुन बरनत नहिं पार लहै ।।

१ आहारक, आहारक मिश्र २. दुर्बल ३. प्रौढ–मजबूत ४. बिल्ली
५. दीनता के भाव बिना ।

एक दिना ते छोर बनांतर, ठाड़े मुनि वैराग भरे ।
पौनपरीषहसौं नहिं कांपें, मेरुसिखर ज्यों अचल खरे ।१७४।
सो मर नरक कमठचर पापी, नानाभांति विपत्ति भरी ।
तिसही काननमैं विकटानन[1], पंचानन[2]की देह धरी ।१७५।
देखि दिगंबर केहरि[3] कोप्यौ पूर्वभवांतर बैरवह्यौ ।
धायौ दुष्ट दहाड़ ततच्छन, आन अचानक कंठ गह्यौ ।१७६।
तीखे नखन विदारैं काया, हाथ कठोरन खंड करैं ।
बांकी दाढ़नसौं तन भेदैं, वदन[4] भयानक ग्रास भरैं ।१७७।
यों पसुकृत परचंड परीषह, समभावनसौं साधु सही ।।
क्रोध विरोध हिये नहिं आन्यो, परमछिमा उरमांझ बही ।
धनि धनि श्रीआनन्दमुनीसुर, धनि यह धीरजभाव भजे ।।
ऐसे घोर उपद्रवमैं जिन, जोगजुगतसौं प्रान तजे ।१७९।
अंतसमयपरजंत तपोधन, सुभभावनसौं नाहिं चये ।
आनत नाम स्वर्गमैं स्वामी, सुरगनपूजित इन्द्र भये ।१८०।

दोहा ।

सुरगलोक बरनन लिखौं, जथासकति सुखरीत ।
धर्म धर्म के फलविषैं, ज्यों मन उपजै प्रीत ।।१८१।।

चौपई ।

चंदकांति मूंगामनिमई । नानाबरन भूमि बरनई ।।
रातदिवसको भेद न जहां । रतनउदोत निरंतर तहां ।१८२।
मनि कंगुरे कंचन प्राकार । औंड़ी परिखा[5] ऊंचे द्वार ।।

---

१. भयंकर मुख वाले २. सिंह ३. सिंह ४. मुख ५. खाई ।

तोरन तुंग रतनगृह लसैं । ऐसे सुरगलोकपुर बसैं ।१८२।
चंपक पारिजात मंदार । फूलन फैल रही महकार ।।
चैतबिरछतें बढ़चो सुहाग[1] । ऐसे सुरग रवाने[2] बाग ।१८४।
बिपुल[3] वापिका[4] राजैं खरीं । निर्मल नीर सुधामय भरीं ।।
कंचनकमलछई छबिवान । मानिकखंडखचित सोपान ।।१८५।
कामधेनु सोहैं सब गाय । कलपवृच्छ सबही तरुराय ।।
रतनजाति चिंतामनि सबै । उपमा कौन सुरगकौं फबै ।१८६।
गान करैं कहिं सुरसुन्दरीं । बन-वीथिन[5] बैठी रसभरीं ।।
कहीं देवगन वनितासंग । लीलाबन विचरैं मनरंग ।।१८७।।
मंद सुगंधि बहै नित वाय । पहुपरैनुरंजित[6] सुखदाय ।।
आंधी मेह न कबहीं होय । ताप तुसार[7] न व्यापै कोय ।१८८
रितुकी रीति फिरै नहिं कदा । सोमकाल सुखदायक सदा ।
छत्रभंग चोरी उतपात । सुपने नहीं उपद्रवजात ।।१६०।।
ईति भीति भूचाल न होय । बैरी दुष्ट न दीसै कोय ।।
रोगी दोखी दुखिया दीन । बिरधवंस[8] गुणसंपतिहीन ।१६०।
बढ़ती अंगविकलता कहीं । ये सब सुरगलोकमैं नहीं ।।
सहज सोम सुन्दर सरवंग । सब आभरनअलंकृत अंग ।१६१।
लच्छनलंछित सुरभि सरीर । रिद्ध-सिद्धमंदिर मनधीर ।।
कामसरूपी आनंदकंद । कामिनिनेत्रकमलिनीचंद ।।१६२।।
बदन प्रसन्न प्रीतरस भरे । विनयबुद्धि विद्या आगरे ।।

---

१. सौन्दर्य २. सुन्दर ३. घनी ४. बावड़ी ५. गली ६. पुष्प पराग से अनुरंजित ७. पाला ८. बुढापा ।

यों बहुगुणमंडित स्वयमेव । ऐसे सुरगनिवासी देव ।।१६३।।

दोहा ।

ललितवचन लीलावती, सुभलच्छन सुकुमाल ।
सहजसुगंध सुहावनी, जथा मालती माल ।।१६४।।
सीलरूप लावन्यनिधि, हावभावरसलीन ।
सीमा सुभगसिंगारकी, सकलकलापरवीन ।।१६५।।
निरत गीत संगीत सुर, सब रसरीतमँझार ।।
कोविद[1] होंहि सुभावतैं, सुरगलोककी नार ।।१६६।।
पंचइन्द्रिमनकौं महा, जे जगमैं सुखहेत ।
तिन सबहीकौ जानियौ, सुरगलोकसंकेत ।।१६७।।

चौपई ।

इत्यादिक बहुसंपतिथान । देवलोकमहिमा असमान[2] ।।
आनतवर[3] विमान है जहां । धरचौ जनम सुरपतिने तहां ।।

दोहा ।

उपज्यौ संपुट[4] गर्भतैं, तेज पुंज अति चंड ।
मानौं जलधरपटलतैं, प्रगट्यौ दामिनि[5]-दंड ।।१६९।।
एक महूरतमैं तहां, संपूरन तन धार ।
किधौं रतनकी सेज तजि, सोवत उठ्यौ कुमार ।।२००।।
मनिकिरीट माथे दिपैं, आनन अधिकसुरूप ।
कानन कुण्डल जगमगैं, पानन कटक अनूप ।।२०१।।
भुजभूषनभूषित भुजा, हिये हार छबि देत ।

१. बुद्धिमान २. समानता रहित ३. तेरहवां स्वर्ग ४. उत्पाद शैया ५. बिजली

अंग अंग इत्यादि बहु, सब आभरनसमेत ।।२०२।।

चौपई।

सनै सनै देखै दिस सही । लोचनकोर कान लगि रही ।।
विसमयवंत होय मन ताम । कहै कौन आयौ किस धाम ।।
अहो कौन यह उत्तम देस । सकलसंपदाथान विसेस ।।
कंचनके मन्दिर मनिजरे । दीसैं दिव्य अपछराभरे ।।२०४।।
अति उतंग[1] अति ही दुति धरै । मध्य सभा मंडप मनहरै ।।
सिंहासन अद्‌भुत इहि ठाम । मानौं मेरुसिखर अभिराम ।।
अनुपम नाटक देखनजोग । श्रवणसुखद ये गीत मनोग ।।
ये लावन्यवतीं वरनारि । रूपजलधिवेला[2] उनहारि ।२०६।
ये उतंग हाथी मदभरे । तेज तुरंगनके गन खरे ।।
कंचनरथ पायकबल[3] जेह । मो प्रति सिर नावैं सब येह ।२०७।
सब आनन्द भरे मुझ देख । सब विनीत सब सुन्दर भेख ।।
जयजयकार करैं बिहँसाय । कारन कछु जान्यौ नहिं जाय ।।

दोहा।

इन्द्रजाल अथवा सुपन, कै माया भ्रम कोय ।
यों सुरेस सोचै हिये, पै निरनय नहिं होय ।।२०९।।

चौपई।

तब तिस थानक देव प्रधान । मनकी बात अवधिसौं जान ।।
जोगवचन बोलै सिरनाय । संसयहरन स्रवनसुखदाय ।२१०।
हम विनती सुनिये सुरराज । जीवन जनम सफल सब आज ।

१. ऊंचा २. पाज ३. पैदल।

अब सनाथ स्वामी हम भये । जनमजोगतैं पावन थये ।२१
सूरजउदय कमलिनी-बाग । विकसैं जथा जग्यौ सिर भाग ।
नन्दवर्ध[1] हम देहिं असीस । चिर यह राज करो सुरईस ।२१
अहो नाथ यह उत्तम ठाम । सुरग तेरमो आनत नाम ।।
जगतसार लछमीकौ येह । निरुपमभोग निरंतर गेह ।।२१३
तुम इहि थान इन्द्र अवतरे । पूर्वजन्म दुद्धर तप धरे ।।
ये सब सुर सेवक तुमतनें । ये परिवार लोक हैं घनें ।।२१४

सोरठा।

ये मनोग वनिता मंडली । तुम आदेस चहै मनरली ।।
ये पटदेवी[2] लावनखान[3] । सब देवीं इन मानें आन ।।२१५
ये बिमान पुर महल उतंग । चमर छत्र सेना सप्तंग ।।
धुजासिंहासनआदि मनोग । सकल सम्पदा यह तुम जोग ।२१
ऐसे वचन अनन्तर[4] तबै । जान्यौ इन्द्र अवधिबल सबै ।।
मैं पूरव कीनौं तप घोर । दंडे करम धरमधनचोर ।।२१७।
जीवजातकौं निर्भयदान । दीनौं आप बराबर जान ।।
सब उपसर्ग सहे धरि धीर । जीत्यौ महारागरिपु बीर ।२१
काम विषम वैरी वस कियौ । अरु कषाय वनकौं जारियौ ।
जिनवरआन अखंडित पोष । चारित-चिर-पाल्यौ-निरदोष२
इहि विध सेयौ धर्म महान । तिस प्रभाव दीखै यह थान ।
दुरगतिपात निवारन करौ । तिन मुझ इन्द्रलोक ले धरौ२२
सो अब सुलभ नहीं इस देह । भोग जोग है थानक येह ।।

१. आनन्द पूर्वक बढना २. प्रमुखदेवी=इन्द्राणी ३. लावण्य से भरपूर ४. पश्चा

रागआग दुखदायक सदा । चारितजल बिन बुझै न कदा ।।
सो कारन सुरगतिमैं नाहिं । व्रतको उदय न या पदमाहिं ।।
ह्यां सम्यक्दरसन अधिकार । संकादिक मलवरजित सार२२२
कं जिनवरको भक्ति सहाय । और न दीखै धर्मउपाय ।।
यह विचारि जिनपूजनहेत । उठ्यौ इन्द्र परिवारसमेत ।२२३।
अमृतवापिकामैं करि न्हौन । गयौ जहां मनिमय जिनभौन ।।
रतनबिम्ब बन्दे विहसाय । भावभगतसौं सीस नवाय ।२२४।
पूजा करी दरब धरि आठ । पुलकितअंग पढ़्यौ थुतिपाठ[1] ।
चैतबिरछजिनप्रतिमा जहां । महामहोच्छव कीनौं तहां ।२२५
यों बहु पुन्य उपायो सही । फेरि आय निज सम्पति गही ।।
दिव्यभोग भुंजे बड़भाग । लोकोत्तम जिस सहजसुहाग ।२२६।
सोभनरूप[2] प्रथम संठान[3] । वसु[4] वैक्रियक सुलच्छनवान ।।
कोमल सुरभि सचिक्कन देह । सातधातवरजित गुनगेह ।२२७।
पलकपात लोचनमैं नहीं । मलपसेव नख केस न कहीं ।।
जरा कलेस न चिंता सोग । नाहीं अलप मृत्युभय रोग ।२२८
इत्यादिक दुखजोग अनेक । तिनमैं नहीं अमरके एक ।।
आठरिद्धि अनिमादि पसत्थ[5] । तिसबल सकलकाज समरत्थ ।
सुरग लोकके सुखकी कथा । कहै कहां लौं बुधबल जथा ।।
बैठि मनोगत विमल विमान । विचरैं नभपथ वांछितथान ।।
कबही मेरु जिनालय गमैं । कबही आन कुलाचल रमैं ।।
दीप समुद्र असंख अपार । करैं सुरेंद्र सुछंद विहार ।।२३१।।

१. स्तुति २. सुन्दर ३. समचतुरस्र संस्थान ४. आठ ५. प्रशस्त=उत्तम ।

वर्ष वर्षमैं हर्ष बढ़ाय । तीन बार नन्दीसुर जाय ।।
पंचकल्यानक समयसुजोग । करै तीर्थपदनमन नियोग ।२३२।
और केवली प्रभुके पाय । दोय कल्यानक पूजैं आय ।।
निज कोठे थिर होय सुग्यान । करै दिव्यवानीरसपान ।२३३।
सभासिंहासन बैठि सुरेस । देय सुरनप्रति हितउपदेस ।।
करै तत्त्ववरनन विस्तार । अनेकांतवानी अनुसार ।।२३४।।
जे सुर सम्यक्‌दरसनहीन । तपबल देव भये सुखलीन ।।
तिनप्रति धर्मवचन उचरै । दरसनगुनकी प्रापति करै ।।२३५।।
इहबिध बिबिध करै सुभकाज । महापुन्य संचै सुरराज ।।
दरसनग्यान रतनभंडार । चारित गुनको नहि अधिकार ।२३६।
धर्मवासनावासित जोग । करै पुनीत[1] पुन्यफलभोग ।।
कबहीं सुनै अपछरा-गान । निरखै नाटक निरुपम थान ।२३७।
कबहीं सुभ सिंगाररसलीन । हाव भाव जोवै[2] परवीन ।।
कबहीं हास्यकथा विस्तरै । वनक्रीड़ा देविन संग करै ।२३८।
यों नानाविध करत विलास । प्रतिदिन सुखसागरमैं वास ।।
साढ़े तीन हाथ परवान । दिव्यसरीर अतुल दुतिवान ।२३९।
सागर बीस परमथिति[3] जास । बीस पच्छ[4] पर लेय उसास ।।
बीसहजार वर्ष अवसान[5] । मनसा भोजन करै महान ।२४०।
पंचम पिरथी लौं जिस सही । अवधिसकति जिनसासन कही ।
तावत मान विक्रियाखेत । सकलकाज साधनसुख हेत ।२४१।

१. पवित्र २. देखे ३. उत्कृष्ट स्थिति ४. पखवाड़े ५. अन्त ।

असंख्यात सुर सेवन पाय । देवोनेत्रकमलदिनराय ।।
यों पूरवकृत पुन्यसंजोग । करैं इन्द्र इन्द्रासन भोग ।।२४२।।

दोहा ।

कहा इन्द्रअहमिंद्र पद, जनम धरैं फिर आय ।।
जैनधर्म नृपकी धुजा, लोक-सिखर फहराय ।।२४३।।

इति श्रीमत्पार्श्वपुराणभाषायां आनन्दरायइन्द्रपदप्राप्तिवर्णनं नाम चतुर्थोऽधिकारः ।

पाँचवाँ अधिकार ।

दोहा ।

बन्दौं पारसपदकमल, अमलबुद्धि दातार ।।
अब बरनौं जिनराजके, पंच कल्यानक सार ।।१।।

चौपई

प्रथम अनंत अलोकाकास । दसौं दिसा मरजाद न जास ।।
दूजो दरब जहां नहिं और । सुन्न सरूप गगन सब ठौर ।।२।।
तहां अनादि लोकथिति जान । छीदे[1] पांय पुरुष-संठान[2] ।।
कटिपैं[3] हाथ सदा थिर रहै । यह सरूप जिनसासन कहै ।।३।।
पौन[4] पिंड[5] बेढ़यौ सरबंग । चौदह राजू गगन उतंग ।।
घनाकार राजू गन ईस । कहे तीन सौं तेंतालीस ।। ४ ।।

१. पांव फैलाये हुए २. पुरुष के आकार ३. कमर पर ४. हवा ५. समूह ।

जीवादिक छह दरब सदीव । तिनसौं भर्यौ जथा घट घीव ।
स्वयंसिद्ध रचना यह बनी । ना इस करता हरता धनी ॥५॥
दरब दृष्टिसौं ध्रौव्यसरूप । परजयसौ उतपतछयरूप ॥
जैसे समुद सदा थिर लसै । लहर न्याय उपजै अरु नसै ॥६॥
लोक[1]-नाड़ि तिस मध्य महान । चौदह राजू व्योम उचान ॥
राजूमित[2] चौड़ी चहुंपास । यह त्रसखेत जिनागम भास ।७।
याके बाहर जंगम[3] जीव । समुदघात बिन नाहिं सदीव ॥
तामैं तीनौं लोक बिसाल । ऊरध मध्य और पाताल ॥८॥
सोलह स्वर्ग पटल बावन्न । नव ग्रीवक नव जान रवन्न ॥
अनुदिस और अनुत्तर येह । एक एक ही पटल गिनेह ॥९॥
ये सब त्रेसठ पटल बखान । सिद्धखेत सोहैं सिर थान ॥
ऊरध लोक बसै इहि भाय । उत्तम सुरथानक सुखदाय ।१०।
अधोलोकमैं बहु बिध भेव । सात नरक असुरादिक देव ॥
मध्यलोक पुनि तीजो तहां । असंख्यात दीपोदधि जहां ।११।
तिनमैं सोभावंत सुहात । जंबूदीप जगतविख्यात ॥
लच्छ[4] महाजोजन विस्तार । सूरजमंडलकी उनहार ॥१२॥
वज्रकोट जिस ओट अभंग[5] । परिमित जोजन आठ उतंग ॥
चारौं दिस दरवाजे चार । तिनके नाम लिखौं अवधार[6] ।१३
विजय नाम पूरबमैं जान । वैजयंत दच्छिन दिस ठान ॥
पच्छिम भाग जयंत दुवार । उत्तरमैं अपराजित सार ।१४।

---

१. त्रस नाड़ी २. एक राजू प्रमाण ३. त्रस ४. एक लाख योजन ५. भेद रहित ६. धारण करो ।

लवन-समुद्र खातिकारूप[1] । चहुंदिस बेढ़्यौ सजल सरूप ।।
तहां सुदरसन मेरु महान । मध्य भाग सोभा असमान ।।१५।
अति उतंग लख जोजन सोय । रिजुविमान जा ऊपर होय ।
सब सैलनमैं ऊंचो यहै । ग्रीव उठाय किधौं इम कहै ।।१६।।
करै कौन गिरि मेरी रीस[2] । जिनपति न्हौन होय मुझ सीस ।
चारौं दिस चारौं गजदंत । नील निषधसौं लगे महंत ।१७।
छह कुलपर्वत बड़े विथार[3] । पूरब पच्छिम दीरघ सार ।।
आठ महागिरि दिग्गज नाम । मेरु निकट आठों दिस ठाम ।१८।
कनक[4] वरन सोलह वच्छार । महाविदेहविषैं छबिसार ।।
कंचनगिरि दोसै परवान । सीता सीतोदा तट थान ।।१६।।
कुरु भूमाहि जनक गिरि चार । नील निषधके निकट निहार ।
चार नाभिगिरि मिथ्या नाहिं । मध्यम जघनभोगभूमाहिं ।२०।
विजयारध पर्वत चौंतीस । इतने ही वृषभाचल दीस ।।
ते मलेच्छमधिखंडनविखैं । चक्री जहां नांव निज लिखैं ।२१।
यों गिरि दीपविषैं बरनये । ग्यारह अधिक एक सौ भये ।।
भद्रसाल बन दोय सुवास । पूरब अपर[5] मेरुके पास ।।२२।।
दो तरु जंबू-सेंभलतनैं । उत्तम भोगभूमिमैं बनैं ।।
छह द्रह बड़े कुलाचलसीस । पदम महापदमादिक दीस ।२३।
बीस सरोवर और सुनेह । सीता सीतोदामधि तेह ।।
उत्तम मध्यम जघन विसेस । भोगभूमि छह कही जिनेस ।२४।
महादेस चौंतीस सुखेत । ऐरावत अरु भरत समेत ।।

१. खाई २ बराबरी ३. बिस्तार ४. सोने जैसे रंग के ५. पश्चिम ।

इतनी ही नगरी परवान । आरजखंडमध्य थिर थान ।२५।
उपसमुद्रको संख्या यही । कछू विनासिक कछु थिर सही ।।
पूरब दिस दो बाग महंत । देवारन्य दीपके अंत ।। २६ ।।
ऐसे ही पच्छिम दिस दोय । भूतारन्य नाम तिन होय ।।
गंगादिक सरिता दसचार । चौसठ महा विदेहमझार ।।२७।।
बारह विपुल विभंगा जेह । महानदी नव्वै सब येह ।।
इतने ही सब कुंड महान । जहां तरंगिनि[1] उतरैं आन ।२८।
सत्रह लाख सवन परिवार । सहसछानवै ऊपर धार ।।
यह सब जंबूदीपसमास । आगममैं विस्तार प्रकास ।।२९।।

दोहा ।

यही कथन अंगनविषैं, वरन्यौ गनधर ईस ।
तीनलाख पदमैं सही, ऊपर सहस पचीस ।।३०।।

चौपई ।

यों अनेक रचना आधार । दीपराज राजै अधिकार ।।
तहां मेरुके दच्छिन भाग । किधौं भूमितिय सुभग सुहाग ।३१।
भरतखंड छहखंड समेत । धनुषाकार विराजत खेत ।
तामैं सबसुखधर्मनिवास । कासीदेश कुसलजनवास ।।३२।।
गांव खेट पुर पट्टन जहां । धन-कन भरे बसैं बहु तहां ।।
निवसैं नागर जैनी लोय । दयाधर्म पालैं सब कोय ।।३३।।
जिनमंदिर ऊंचे जिनमांहि । नरनारी नित पूजन जांहि ।।
पद पद पुरपंकित[2] पेखिये । उदवसथान[3] न कहिं देखिये ।३४।

---

१. दूसरी नदी २. नगरों की पंक्ति ३. ऊजड़ भूमि ।

नीर अगाध नदी नित बहैं। जलचर जीव जहां नित रहैं ।।
मुनिजनभूषित जिनके तीर। काउसग्ग[1] धरि ठाढ़े धीर।३५।
ऊचे परवत झरना झरैं। मारग जात पथिक मन हरैं ।।
जिनमैं सदा कंदराथान[2]। निहचल देह धरैं मुनि ध्यान ।३६।
जहां बड़े निर्जनवनजाल। जिनमैं बहुविध बिरछ विसाल।
केला करपट कटहल कैर। कैथ करोंदा कौंच कनैर ।।३७।।
किरमाला कंकोल कल्हार। कमरख कंज कदम कचनार ।।
खिरनी खारक पिंडखजूर। खैर खिरहटी खेजड़ भूर ।।३८।।
अर्जुन अमली आम अनार। अगर अंजीर असोक अपार ।।
अरनी आँगा अरलू भने। ऊंबर अंड अरीठा घने ।।३९।।
पाकर पीपल पूग[3] प्रियंग। पीलू पाटल[4] पाढ़ पतंग ।।
गोंदी गुड़हल गूलर जान। गांडर[5] गुंजा[6] गोरख पान।४०।
पंचा चोढ़ चिरोंजी फली। चंदन चोल चमेली भली ।।
जंड जंभीरी जामन कोट। नीम नारियल हीस हिंगोट।४१।
सोना सीसम सेंभल साल। सालर सिरस सदा फलजाल ।।
बांस बबूल बकायन बेर। बेत बहेड़ा बड़हल पेर ।।४२।।
महुआ मौलसिरी मचकुन्द। मरुवा मोखा करना कुन्द[7] ।।
तूत तबोंलनि तींदू ताल। तगर तिलक तालीस तमाल।४३।
इहि बिध रहे सरोवर छाय। सबही कहत कथा बढ़ जाय।
तहां साधु एकांत विचार। करैं पठनपाठनविधि सार ।।४४।।

---

१. कायोत्सर्ग २. गुफा ३ सुपारी ४. गुलाब ५. खस ६. चिरमी ७. मोगरा

बिबिध सरोवर सीतल ठाम । पंथी बैठि लेहिं बिसराम ।।
निर्मल नीर भरे मनहार । मानौं मुनिचित विगतविकार ।४५।
सोहैं सफल सालके[1] खेत । भये नम्र फलभारसमेत ।।
सज्जनजन ज्यों संपति पाय । छोड़ गुमान चलें सिर नाय ।४६।
केवलग्यानी करत विहार । जहां सदा सबसुखदातार ।।
आचारज बहुसंघसमेत । विहरमान भविजन हितहेत ।।४७।।
केई जहां महाव्रत लेंहि । भवदुखवास जलांजलि देंहि ।।
केई घोर उग्र तप करें । ते अहिमिंद्र जाय अवतरें ।।४८।।
केई श्रावकके व्रत पाल । अच्युत स्वर्ग बसें चिरकाल ।।
केई कर जिनजग्य[2] विधान । पावें पुन्नी[3] अमरबिमान ।४९।
केई मुनिवरदानप्रभाव । भोगें भोगभूमिकी आव ।।
अतिपुनीत सब ही विध देस । जहां जनम चाहैं अमरेस ।।५०
तहां बनारस नगरी बसै । देखत सुरनरमन उल्हसै ।।
है प्रसिद्ध धरनीपर सोय । तीरथराज कहैं सब कोय ।।५१।।
सोभा जाकी कही न जाय । नाम लेत रसना[4] सुचि थाय ।
जहां सरोवर नाना भांति । जिनके तीर तरोवर पांति ।५२।
निजजीवन[5] जीवन सुख देंहि । कमलसुवास सिलीमुख[6] लेंहि
सोहैं सघन रवाने बाग । फले फूल फल बढ़यौ सुहाग ।५३।
सजल खातिका[7] राजै खरी । उठैं लहरि लोयन[8]-गति-हरी
कोट उतंग कांगुरे लसैं । मानौं सुरगलोक दिस हंसैं ।।५४।।

---

१. चावल २ जिनेन्द्र पूजन ३. पुण्यवान ४. जीभ ५. पानी ६. भौंरा ७. खाई ८. नेत्र ।

ऊंचे महल मनोहर लगैं। सुवरन कलस सिखर जगमगैं ॥
अति उन्नत जिनमंदिर जहां। तिन महिमा वरनन बुध कहां ॥
रतनबिंब राजैं जिहि माहिं। सिखर सुरंग धुजा फहराहिं।
कंचनके उपकरन समाज। आवैं भविजन पूजाकाज ॥५६॥
जय जय सब्दसहित छबि छजै। किधौं धर्म-रतनायर[1] गजै।
नगरनारि नित बंदन जाहिं। जिनदरसनउच्छव उरमाहिं।५७।
भूषनभूषित सुन्दर देह। मानों सुभग अपछरा येह ॥
सब गृहस्थ साधैं षट कर्म। पालैं प्रजा अहिंसा धर्म ॥५८॥
दोष अठारहवर्जित देव। तिस प्रभुकौं पूजैं बहु भेव ॥
चाह-चिहन[2]-वरजित जो धीर। सोई गुरु सेवैं वरबीर ।५९॥
आदि अंत जे विगत विरोध। तेई ग्रंथ सुनैं मन सोध ॥
सत्य सील गुन पालैं सदा। तातैं लोग सुखी सर्वदा ॥६०॥

दोहा।

प्रजा बनारस नगरकी, नागर नीत सुजान ॥
चार रतनके पारखी, लहिये घर घर थान ॥६१॥
देव धर्म गुरु ग्रंथ ये, बड़े रतन संसार।
इनकौं परखि प्रमानिये, यह नर-भव-फल सार ॥६२॥
जे इनकी जानैं परख, ते जग लोचनवान।
जिनकौं यह सुधि ना परी, ते नर अंध अजान ॥६३॥
लोचनहीनें पुरुषकौं, अंध न कहिये भूल ॥
उर लोचन जिनके मुंदे, ते आंधे निर्मूल ॥६४॥

१. रत्नाकर–समुद्र २. इच्छा रहित ३. श्रेष्ठ।

चौपई।

इहि बिध नगर बसै बहु भाय। सब सोभा बरनी नहिं जाय।
अस्वसेन भूपति बड़भाग। राज करै तहां अतुल सुहाग।६५।
कासिपगोत्र जगतपरसंस। बंस-इख्वाक-विमल-सर-हंस।।
तेजवंत दिनपति[1] ज्यौं दिपै। प्रभुता देखि सचीपति[2] छिपै।६६।
कलपतरोवर सम दातार। रतिपति[3] लाजै रूप निहार।।
रयनायर[4] सम अति गंभीर। पर्वतराज बराबर धीर।।६७।।
सोम समान सबनि सुखदाय। कीरति-किरन रही जग छाय।
तीन ग्यानसंजुगत सुजान। परम विवेकी दयानिधान।।६७।।
जिनपदभक्ति धर्म-धन-बास। गुरुसेवारति नीतिनिवास।।
कला-चातुरी-बुधि-विज्ञान। विद्या-विनय-संपदा-थान।।६९।
सकलसारगुणमानिककोष। उभयपच्छ निर्मल निर्दोष।।
जिनसूरजउदयाचल राय। तिस महिमा बरनी किमि जाय।७०।
वामादेवी नाम पवित्त। तिनके घर रानी सुभ चित्त।।
निरुपम लावन सबगुनभरी। रूपजलधिबेला[5] अवतरी।।७१।।
नखसिख सहज सुहागिनि नार। तीनलोकतियतिलक सिंगार
सकल सुलच्छनमंडित देह। भाषा मधुर भारती[6] येह।७२।
रंभा रति जिस आगे दीन। रोहिनिरूप लगै छबि छीन।
इन्द्रबधू[7] इमि दीसै सोय। रविदुति[8] आगे दीपकलोय।७३।
जनमनहरणबढ़ावन एम। कातिक-चंद्र-चंद्रिका[9] जेम।।

---

१. सूर्य २. इन्द्र ३. कामदेव ४. रत्नाकर ५. सीमा ६. भारत की ७. इन्द्राणी ८. सूर्य का प्रकाश ९. चांदनी।

सकल सार गुनमनिकी खानि । सीलसंपदाकी निधि जानि ।७४।
सज्जनताकी अवधि अनूप । कला सुबुधिकी सीमारूप ।।
नाम लेत अघ तजैं समीप । महापुरुष-मुक्ताफल-सीप ।।७५।।
त्रिभुवननाथ रत्नकी मही । बुधिबल महिमा जाय न कही ।
बहुबिध दंपति संपतिजोग । करैं पुनीत पुन्यफलभोग ।।७६।।

उक्तं च षट्पाहुडग्रन्थे—आर्या

तित्थयरा[1] तप्पियरा[2] हलहर[3] चक्काइं[4] वासदेवाइं[5] ।
पडिवास[6] भोयभूमिय[7] आहारो[8] णत्थि[9] णीहारो[10] ।७७।

चौपई ।

जिनवर जिनमाता जिनतात । वासदेव बलदेव विख्यात ।।
चक्कीराय जुगलिया जोय । इन सबके मल मूत्र न होय ।७८।

दोहा ।

पूरब गाथाकी अरथ, लिख्यौ चौपई लाय ।।
षट् पाहुड़टीकाविषैं, देख लेहु इहि भाय ।।७९।।

चौपई ।

अब आगे भविजन मन थंभ । सुनो गर्भमंगलआनन्द ।।
एक दिना सौधर्म सुरेस । धनपति[11] प्रति दीनौं उपदेस ।८०।

---

१. तीर्थङ्कर २. माता पिता ३. बलदेव ४. चक्रवर्ती ५ नारायण ६. प्रतिनारायण ७. भोगभूमियां ८. भोजन ९ नहीं होते १०. मल मूत्र त्याग ११. कुबेर ।

आनतेंद्रकी थितिमैं सही । आयु छ मास शेष सब रही ।।
तेबीसम अवतार महान । होसी नगर बनारस-थान ।।८१।।
अस्वसेन भूपतिके धाम । पंचाचरज[1] करो अभिराम ।।
यह सुरेन्द्रने आज्ञा करी । सो कुवेर निज माथें धरी ।।८२।।
चल्यो तुरत लाई नहिं बार । सोहै संग अमर-परिवार ।।
हरषित अंग पिता घर आय । करी रतन-वर्षा बहुभाय ।।८३
जिनके तेज तिमिर नहिं रहै । नाना बरन प्रभा लहलहै ।
ऐसे निर्मोलक[2] नग[3] भूर[4] । बरसे नृपके आंगन पूर ।।८४

दोहा ।

नभसौं आवै झलकती, मनिधारा इहि भाय ।।
सुरगलोक-लछमी किधौं, सेवन उतरी माय ।।८५।।

चौपई ।

साढ़े तीन कोड़ परवान । यौं नित बरसें रतन महान ।।
सुरभि सुगंध कलपतरुफूल । बरसावैं सुर आनन्दमूल ।।८६।
गंधोदककी बरसा करें । मानौं मुकताफल अवतरें ।।
प्रतिदिन देव-दुन्दुभी बजैं । किधौं महासागर यह गजैं ।।८७
मंद वरद जय जय उच्चरें । मात पिता प्रति सुर यौं करें ।।
इहि विध पंचाचरज विलोक । जैनी भये मिथ्याती लोक ।।८८

दोहा ।

देवन किये छ मास लौं, पंचाचरज अनूप ।।
देखि देखि परजा भई, आनन्द अचरजरूप ।।८९।।

---

१. पांच आश्चर्य (मंद सुगन्ध हवा, गधोदक वृष्टि, पुष्पवृष्टि, दुन्दुभि बाजा, जयघोष) २. अमूल्य ३. रत्न ४. बहुत ।

चौपई ।

यों अतिआनंदसौं दिन जांहि । माता मगन सुखोदधि[1] मांहि ।
मानिकजटित मनोहर धाम । रत्नपलंक सेज अभिराम ।९०।
मनिमय दीप जहां जगमगैं । अति सुगन्ध आवत अलि पगैं ।
करि चतुर्थ आनन्द[2]-सनानि । करैं सयन जननी सुख मानि।९१
पच्छिम[3] रैन रही जब आय । सोलह सुपनैं देखे माय ।।
तिनके नाम लिखौं अवलोय । पढ़त सुनत पातक छय होय।९२

पद्धड़ी

सुपनावलि सोलह सुनहु मीत । जिनराजजनमसूचक पुनीत ।
ऐरावत हाथी प्रथम दीस । मदगोलो गंड[4] विसाल सीस।९३।
देख्यौ डक्कारत[5] वृषभराज[6] । अतिउज्जल मोतीबरन[7] भ्राज[8]।
देख्यौ पंचानन[9] धवलदेह[10] । निज नाद करै ज्यौं सरद-मेह।९४
देख्यौ मनिआसनसोभमान । तहं हेमकलस कमला[11]-सनान ।।
देखी दो पावन पहुपमाल[12] । भ्रमरावलि-बेढ़ी अतिविसाल९५
रविमंडल देख्यौ तम दलंत । उदयाचल ऊपर उदयवंत ।।
संपूरन तारापति[13]-विमान । तारावलि-मध्य विराजमान ।९६
जलतिरत मनोहर मीन[14]-जोट । देखे जिन-जननी पलकओट ।
देखे चामीकरकलस[15] दोय । अति झलकैं वारिजढंके सोय९७

---

१. सुख-समुद्र २. रजो दर्शन के चतुर्थ दिन का स्नान ३. रात्रि की अन्तिम प्रहर ४. गाल ५. उच्च स्वर से बोलता हुआ ६. बैल ७. सफेद ८. शोभा दे ९. सिंह १०. सफेद शरीर वाला ११. लक्ष्मी १२. पुष्पमाला १३. चन्द्रमा १४. मछली का जोड़ा १५. स्वर्णकलश ।

देख्यौ कमलाकर कमलछन्न। बहु हंसी हंसनसौं रवन्न ॥
देख्यौ रयनायर[1] गर्जमान। पुनि सिंहपीठ[2] मानिकनिधान।९८
फिर देख्यौ देव-विमान जोग। धुज घंटा झालरसौं मनोग।
प्रगट्यौ महि फोरि फनींद्रधाम[3]। मनि कंचनमय नयनाभिराम[4]
पुनि रतनरासि देखी अनूप। इन्द्रायुधवरन[5] विचित्ररूप ॥
निर्धूम[6] धनंजय[7] दीपमान। ये देखे सोलह सुपन जान।१००

दोहा।

गजप्रवेश मुखकमलमैं, सुपनअंत अविलोय ॥
सुखनिद्रा पूरी भई, भयौ प्रात तम खोय ॥१०१॥
पूर्व दिवाकर[8] ऊगयौ, गयौ तिमिर सुखदाय ॥
जैसे जैनसिधांत सुनि, भरमभाव मिट जाय ॥१०२॥
मंद तेज तारे भये, कछु दीखै कछु नाहिं।
ज्यौं तीर्थंकरके उदय, पाखंडी छिप जाहिं ॥१०३॥
सूरजवंसी जे कमल, खिले सरोवरमाहिं।
ज्यौं जिनबिंब विलोकिकै, भविलोचन विकसाहिं।१०४
चंदविकासी कमल जे, विकसत भये न सोय।
ज्यौं अजान जिनवचन सुनि, मुदित मूल नहिं होय।१०५
चक्रवाक[9] हरखित भये, ज्यौं जिनमत-संजोग।
जीव सुमति तिय-नारिकौ, मिट्यौ अनादिवियोग।१०६
घूघूगण[10] भूतलविषैं, आंधे भये असूझ।

---

१. समुद्र २. सिंहासन ३. धरणेन्द्र विमान ४. सुन्दर ५. इन्द्र धनुष के रंग का ६. धूम रहित ७. अग्नि ८ सूर्य ९. चकवा १०. उल्लू।

जैनग्रन्थके रहसमैं, ज्यौं परमती अबूझ ॥१०७॥
कमलकोष मधुकर बंधे, छुटे जग्यौ सिर-भाग।
जथा जीव जिनधर्मसौं, मुक्त होय भवत्याग ॥१०८॥
पथिक लोग मारग चले, सूझे घाट कुघाट।
जिनधुनि सुनि सूझै जथा, सुरग मुकतिकी बाट[1] ॥१०९॥
इहि बिध भयो प्रभात सुभ, आनन्द भयौ अतीव॥
धर्मध्यान आराधना, करन लगे भवि जीव ॥११०॥
जिनजननी रोमांच तन, जगी मुदित मुख जान।
किधौं[2] सकटंक कमलिनी, विकसी निसि अवसान॥१११॥
मंगलीक वाजित्र[3] धुनि, सुनि बंदीजन-गान।
उठी सेज तजि सुखभरी, धरयौ हियें सुभ ध्यान ॥११२॥
सामायिकबिध आदरी, पंच परमपदलीन।
और उचित आचार सब, स्नान-विलेपन कीन ॥११३॥
पहरे सुभ आभरन तन, सुन्दर बसन[4] सुरंग।
कलपबेल जंगम[5] किधौं, चली सखीजन संग ॥११४॥
राजसिंहासन भूप तब, बैठे सभा-सुथान।
देवी आवत देखकै, कियौ उचित सनमान ॥११५॥
अर्धासन बैठनि दियो, जोग वचन मुख भास।
यों रानी विकसत वदन, बैठी भूपति पास ॥११६॥
सभालोग तारे विबिध, भूपति चांद सरूप।

१. रास्ता २. मानो ३ बाजा ४. कपड़े ५ चलती फिरती।

श्रीवामादेवी तहां, दिपै चन्द्रिकारूप ।।११७।।
स्वामी सोलह सुपन हम, देखे पच्छिम रैन ।
श्रीमुखतैं इनकौ सुफल, कहौ श्रवनसुखदैन ।।११८।।
अस्वसेन भूपाल तब, बोले अवधि विचार ।
एकचित्त करि देवि तुम, सुनो सुपनफल सार ।।११९।।

चौपई ।

धुरि[1] गजेंद्रदरसनतैं जान । होसी जगपति पुत्र प्रधान ।।
महावृषभ पुनि देख्यौ सोय । जगजेठो[2] नंदन तुम होय ।१२०
सेत सिंह-दरसनफल भास । अतुल अनंती सकति-निवास ।।
कमलामज्जनतैं[3] सुरईस । करैं न्हौन कनकाचलसीस ।।१२१
पहुपदाम[4] दो देखौ सार । तिसफल दुबिध धर्मदातार ।
ससितैं सकल लोकसुखदाय । तेजपुंज सूरजतैं थाय ।१२२।
मीन जुगलतैं सब सुखभाज । कुंभविलोकनतैं निधिराज ।।
सरवरतैं सब लच्छनवान । सागरतैं गंभीर महान ।।१२३।।
सिंहपीठतैं मृगलोचनी[5] । होय बाल तुम त्रिभुवनधनी ।।
सुरविमान देख्यौ सुख पाय । सुरगलोकतैं उपजै आय ।१२४।
नागराज[6]-गृहकौ सुन हेत । जनमैं मतिश्रुतिअवधिसमेत ।
रतनरासिसैं गुन-मनि-खान । कर्मदहन पावकतैं जान ।१२५।।
गजप्रवेश जो वदनमझार[7] । सुपन-अंत देख्यौ वरनार[8] ।।
श्रीपारसजिन जगतप्रधान । गर्भ तुम्हारे उतरे आन ।१२६।

---

१. ध्रुव रूप से २. जगज्ज्येष्ठ ३. स्नान ४. माला ५. हरिणी से नेत्र वाली ६. धरणेन्द्र ७. मुख में ८. हे उत्तम स्त्री ।

दोहा।

सुनि वामादे सुपनफल, रोमांचित तन भूर।
सुवचन-जल सींचत किधौं, उगे हरष अंकूर।।१२७।।

चौपई।

अब सौधर्म सुरेस विचार। स्वामिगर्भअवसर निरधार।।
कुलगिरि[1]-कमलवासिनी जेह। श्रीआदिक देवी गुनगेह।१२८।
तिन्हैं बुलाय कह्यौ सुभ भाव। अस्वसेन भूपति घर जाव।।
वामादेवीके उरथान। तेवीसम जिन उतरे आन।।१२९।।
तिनकी गर्भसोधना करो। निज नियोगसेवा मन धरो।।
यह सुनि सब आनन्दित भई। इन्द्रआन माथे धर लई।१३०।
सुरगलोक तजि आई तहां। बसै बनारसि नगरी जहां।।
महाकांत तन लावनभरीं। मानौं नभदामिनी[2] अवतरीं।१३१
अंग अंग सब सजे सिंगार। रूपसंपदा अचरजकार।।
चूडामनि माथे जगमगै। देखत चकाचौंध सो लगै।।१३२।।
सुरतरुसुमनदाम[3] उर धरी। अति सुवास दसदिसि विस्तरी
श्रवनसुखद नेवर-झंकार। सोभा कहत न आवै पार।१३३।
आय नृपतिके पायन नई। आयस[4] मांगि महलमैं गई।।
सिंहासनथित माय निहार। करि प्रनाम कीनों जैकार।१३४
दोहा—जननीदेह सुभावसौं, अतिनिर्मल अविकार।।
ताहि कुलाचलवासिनी, और करै सुचि सार।।१३२।।

१. कुलाचलों पर स्थित सरोवरो के कमलों में रहने वाली देवियां
२. आकाशकी बिजली ३. कल्पवृक्ष के फूलों की माला ४. आज्ञा।

कृष्णपाख वैशाख दिन, दुतिया निसि-अवसान।
विमल विशाखा नखतमैं, बसे गर्भ जिन आन ।।१३३।।
जथा सीप[1] संपुटविषैं, मोती उपजै आन।
त्योंही निर्मल गर्भमैं, निराबाध भगवान ।।१३७।।
गर्भ बसैं पर गर्भतैं, बरतैं भिन्न सदीव।
घटतैं घटवरती[2] गगन[3], क्यों नहिं भिन्न अतीव ।१३८।

चौपई।

तब जिन पुन्यपवनसे हले। चउविध सुरके आसन चले ।।
चिह्न[4] देख इन्द्रादिकदेव। जानो अवधिज्ञानबल भेव ।१३९।
जिनवर आज गर्भ अवतरे। यह विचार उर आनन्द भरे ।।
चढि विमान परिवारसमेत। चले गर्भकल्यानक हेत ।१४०।
जयजयकार करत बहुभाय। उच्छवसहित पिताघर आय ।।
मातपिता आसन पर ठये। कंचनकलस नहावत भये ।।१४१।
गर्भमध्यवरती भगवान। प्रनमैं देव धरो मन ध्यान ।।
गीत निरत बाजित्र बजाय। पूजा भेंट करी सिर नाय।१४२।
यों सुरगन सब साधि नियोग। गये गेह करि कारज जोग।
इन्द्रराजकौ आयस पाय। रुचकवासिनी देवी आय ।।१४३।।
जथाजोग सब सेवा करैं। छिन छिन जिनजननीमन हरैं ।।
रुचक दीप तेरहमो जहाँ। रुचकनाम पर्वत है तहां ।।१४४।।
सो चौरासी सहस प्रमान। इतने जोजन उन्नत जान ।।

---

१. सींप के भीतर २. घड़े का ३. आकाश ४. चिह्न।

इतनी ही बिस्तीरन धार । द्वीप मध्यसौं बलयाकार[1] ।१४५।
ताके सिखर कूट बहु लसैं । दिसाकुमारी तिनमैं बसैं ।।
ते सब सेवन आवैं माय । यह नियोग इनको सुखदाय ।१४६

कुसुमलता

आइं भक्ति नियोगिनि देवी, जिन जननीको सेव भजैं ।
कोई न्हान-विलेपन ठानैं । कोई सार सिंगार सजैं ।।१४७।।
कोई भूषण वसन समप्पैं, कोई भोजन सिद्ध करैं ।
कोई देय तंबोल[2] रखाने, कोई सुन्दर गान करैं ।।१४८।।
कोई रतन सिंहासन थापैं, कोई ढालैं चमर बरो[3] ।
कोई सुन्दर सेज बिछावैं, कोई चापैं चरन करो[4] ।।१४९।।
कोई चन्दनसौं घर सींचैं, सारे महल सुवास करी ।
कोई आंगन देय बुहारी, झारैं फूल-पराग परी ।।१५०।।
कोई जलक्रीडा कर रंजैं, कोई बहुबिध भेष किये ।
कोई मनिदर्पन[5] कर धारैं, कोई ठाढीं खडग[6] लिये ।।१५१।।
कोई गूंथि मनोहर माला, आवैं आन सुगंध खरी ।
कोई कलपतरोवरसौं ले, फल फूलनकी भेट धरी ।।१५२।।
कोई काव्य कथारसपोखैं, कोई हास्य विलास ठवैं ।
कोई गावैं बीन बजावैं, कोई नाचत सीस नवैं ।।१५३।।

दोहा ।

इह विध सेवा करत नित, नवैं मास सुभ श्रेय ।
प्रश्न करैं सुरकामिनी, माता उत्तर देय ।।१५४।।

---

१. गोल २. पान ३. श्रेष्ठ ४. हाथ से ५. मणिमय काच ६. तलवार ।

अंतरलापि[1] पहेलिका, बहिरलापिका[2] एव।
बिंदुहीन[3] निरहोठपद[4], क्रियागुप्त बहुभेव ।।१५५।।
इत्यादिक आगमउकत, अलंकारकी जात।
अर्थगूढ़ गंभीर सब, समझावें जिन-मात ।।१५६।।

चौपई।

तुमसी त्रिया कौन जग आन। तीर्थंकर सुत जने महान ।।
जगमें सुभट कौनसे माय। जे नर जीतें विषय कषाय।१५७
कौन कहावे कायर दीन। इन्द्रीमदमेटन बलहीन ।।
पंडित कौन सुमारग चले। दुराचार दुर्मारग दले ।।१५८।।
माता मूरख कौन महंत। विषयी जीव जगत जावंत।
कौन सत्पुरुष नरभव धार। जो साधें पुरुषारथ चार ।।१५९।।
कौन कापुरुष[5] कहिये मर्म। जो सठ साध न जानें धर्म ।।
धन्य कौन नर इस संसार। जोवन समें धरें व्रतभार।।१६०।।
धिक किनकों कहिये सर्वंग। जे धरि करें प्रतिग्या भंग ।।
कौन जीवके वैरी लोय। काम क्रोध हैं और न कोय।।१६१।।
जननी जगमें कौन मलीन। पातकपंकमलिन मतिहीन ।।
कहो कौन नर नित्त पवित्त। ब्रह्मचर्यधारी दिढ़ चित्त।१६२
कौन पसू मानुष आकार। जिनके हिरदें नाहिं विचार ।।
अंध कौन जो देव अदेव। कुगुरुसुगुरुको भेद न भेव ।।१६३।।
बधिर[6] कौनसे उत्तर देह। जैनसिधांत सुनैं नहिं जेह ।।

---

१. वह पहेली जिसका उत्तर उसी पहेली के अक्षरों में हो। २. जिसके उत्तर का शब्द पहेली के शब्दों से बाहर हो। ३. बिन्दुरहितपद ४. ऐसा पद जिसके उच्चारण में होठों से ध्वनि न निकलती हो। ५. कायर। ६. बहरा।

मूकनाम नर कैसे लहै । जो हित सांच वचन नहिं कहै ।१६४
लांबी भुजा कौन करहीन । जिनपूजा मुनिदान न दीन ।।
कौन पाँगले पांवसमेत । जे तीरथ परसैं न अचेत ।।१६५।।
कौन कुरूप जननि कहु एह । सीलसिंगार बिना नरजेह ।।
वेग कहा करिये बड़भाग । दिच्छागहन जगतकौ त्याग ।।
मित्र कौन हितवंचक होय । धर्म दिढ़ावै आलस खोय ।।
सत्रु कौन जो दिच्छालेत । विघन करै परभवदुखहेत ।१६७।
जियकौ कौन सरन है माय । पंचपरमगुरु सदा सहाय ।।
इहिविध प्रस्न करैं सुरनारि । माता उत्तर देहि विचारि ।१६८
वामादेवी सहज प्रवीन । सकल मरम[1] जानै गुनलीन ।।
पुरुषरतन उरअन्तर बहै । क्यों नहिं ग्यान अधिकता लहै ।१६९

दोहा ।

निवसैं[2] निर्मल गर्भमैं, तीन ग्यान-गुनवान ।
फटिकमहलमैं जगमगैं, ज्यों मनि दीप महान ।।१७०।।
उदयवान दिनकरसमय, पूर्व दिसा छवि जेम ।
त्रिभुवनपति-सुत उर धरैं, सोहत जननी एम ।।१७१।।
गर्भभार व्यापै नहीं, त्रिबली[3] भंग न होय ।
देह न दीखै पीतछबि, और विकार न कोय ।।१७२।।
ज्यों दर्पन प्रतिबिंबसौं, भारी कह्यौ न जाय ।
त्यौं जिनपतिके गर्भसौं, खेद न पावै माय ।।१७३।।
कलपलतासी लसत अति, जननी छबिसंयुक्त ।

१. रहस्य २. बसैं ३. पेट के तीन सलवट भगवान के गर्भ में आने पर भी नष्ट नहीं हुए ।

मंदहास कुसुमित भई, अब फलि है फल पुत्त[1] ।।१७४।।
देवराजके वचनसौं, अहनिस[2] हरखत अंग ।
अलखरूप सेवैं सची[3], लिये अपछरा संग ।।१७५।।
पूरववत नवमास लों, पंचाचरज अनूप ।।
अस्वसेन भूपालघर, किये धनद[4] सुखरूप ।।१७६।।
यों सुखसौं निसदिन गये, खेद नामकहिं नाहिं ।।
यह सब पुन्य-प्रभाव है यही रहस इसमांहि ।।१६७।।

इति श्रीपार्श्वपुराणभाषायां गर्भावतारवर्णनं नाम पञ्चमोऽधिकार: ।

छठा अधिकार ।

दोहा ।

रागादिक जलसौं भर्यौ, तन तलाब बहु भाय ।
पारस-रवि दरसत सुखैं, अघ सारस उड़ि जाय ।।१।।
गर्भ मास पूरन भये, नभ निर्मल आकार ।
पोष मास एकादसी, स्याम पच्छ सुभ बार ।।२।।
वामादेवी-पूर्व-दिसि, जनम्यौ जिनवर भान ।
मुदित भयौ त्रिभुवनकमल, असुभतिमिर अवसान[5] ।।३।।
अस्वसेन नृप उदयगिरि, उगयौ बाल दिनेस ।
तीन[6] ग्यान-किरनावली, लिये जगत परमेस ।।४।।

१. पुत्र २. रातदिन ३. इन्द्राणी ४. कुबेर ५. अन्त ६. मति, श्रुत, अवधि

पद्धडि।

जनम्यौ जब तीर्थंकर कुमार। तिहुंलोक बढ्यौ आनँदअपार
दीखै नभनिर्मल दिसि असेस। कहिं आंधी मेह न धूलि लेस।
अति सीतल मंद सुगंधि वाय। सो बहन लगी सुखसांतिदाय
सब सुजनलोक हरषे विसेस। ज्यों कमल-खंड प्रगटत दिनेस[१]
घंटा घन गरजे देवलोक। ज्योतिषिघर केहरिनाद[२] थोक॥
भवनालय बाजे सहज संख। बिंतर-निवास भेरी असंख।७
ये अनहद बाजे बजे जान। जिनराज-जनमअतिसय महान।
बहु कलपतरोवर पहुपवृष्टि। स्वयमेव करन लागे विसिष्ट।८
इंद्रासन कांपे अकसमात। ये करन किधौं सारथ (?) सुजात
जिनजनम भयौ भूलोकमांहि। उच्चासन अब तुम जोग नांहि।
आनम्र[३] भये मणिमुकुट एम। श्रीजिनप्रति करत प्रनाम जेम।
ये चिह्न देखि इंद्रादिदेव। तब अवधिग्यानबल जान भेव[४]॥
निरधार बनारसि-नगर-थान। तीरथपति जनम्यौ आज आन।
प्रभुजन्मकल्यानककरनकाज। उद्यम आरंभ्यौ देवराज।११।
परिवारसहित सब इन्द्रनाम। आये मिलि प्रथमसुरेंद्रधाम॥
नानाविध वाहन चढ़े जेह। जिनभगतिसलिलसिंचतसुदेह
सप्तांग सैन तब चली एम। यह महाजलधिकी लहर जेम॥
हाथी रथ पायक[५] वृषभ[६] बाज[७]। गायनि नर्तकि सेनासमाज
एकेक सैनमें सात कच्छ। तिहिमांहि प्रथम चउ असी लच्छ।
फिर दुगुन दुगुन सातम लों जान, इस भांति सात सेना महान
सौ कोर और छंकोर जोरि। अठसट्ठ लाख ऊपर बहोरि।

१. सूर्य २. सिंहध्वनि ३. झुके ४. भेद ५ पैदल ६ बैल ७. घोड़ा।

यह एकहस्ति सेनाप्रमान । ऐसी ही सब सातौं समान ।।१५।।
तहँ नागदंत[1] सुर आभियोग । सो करहु विक्रिया निजनियोग।।
ताप्रति आग्या दीनी सुरिंद । तिन कीनौं ऐरावत गइन्द ।१६।
लख जोजन मान मतंगईस । अतिउन्नत देह उतंग सीस ।।
सुभसेतवरन[2] मनहरन काय। लीलागति धारै ललित पाय।१७
मदजीवनकलित[3] कपोल स्याम । नख बिद्रुमवरण[4] मनोभिराम
सब लसत सुलच्छन अंगअंग । नहिं गिनीजाहिंजिसछबितरंग
गंभीर घनाघनघोष जास । बहु सुन्दर सुंड सुगंध सांस ।।
हो कामसरूपी कामगौन । जादेखैं मोहत तीन भौन ।।१६।।
घनघोरत घंटा लंबमान । मनि घूंघुरमाला कंठथान ।।
सोवनपाखर[5] सो दिपै देह । संपाजुत[6] मानौं सरद मेह ।।२०
सौ वदन बिराजत सोभवंत । एकेकवदनमें[7] आठ दंत ।।
प्रतिदंत सरोवर एक दीस । सरसरहँ कमलिनी सौपचीस[8] ।२१
एकेक कमलिनी प्रति महान । पच्चीस मनोहर कमल ठान ।।
प्रतिकमल एकसौ आठपत्र । सोभावरनी नहिं जाय तत्र ।२२।
पत्रनपर नाचैं देवनारि । जगमोहत जिनकी छबि निहारि ।
नव नवरस पोषें करत गान । लावन्यजलधि-बेलासमान ।२३
तिस हाथी ऊपर सचीसंग । सौधर्मसुरगपति मुदित अंग[9]।।
आरूढ़[9] भयौ अति दिपत एम । उदयाचलमस्तक भानु जेम ।
चंद्रोपम चामर छत्रसीस । दसजाति कलपसुरसहित ईस ।।

---

१. आभियोग्य जाति के देव २ सफेद रंग ३ मदजल ४. मूंगा का रंग
५. स्वर्ण की झूल ६. बिजली ७. मुख ८. एक सौ पच्चीस ६. चढा ।

ईसानप्रमुख इमि देवराज । निज निज बाहनकों चले साज ।।
परिजनसमेत उर हरखभाव । जिन जनमकल्यानक करन चाव
बाजे सुरदुंदुभि विबिध भेव । जयकार करैं मिलि सकलदेव२६
उपज्यौ कोलाहल गगन थान । सब दिसि दीखैं बाहन विमान ।
आकाससरोवर अतिगँभीर । इंद्रादि अमर तन तेज नीर ।२७
तहां बिकसत मुख अपछरा एम । यह खिल्यीकमलिनीबागजेम ।
इहि बिध देवागम भयौ जान । अवतरे बनारस नगर थान ।२८
चंद्रादि जोतिषी पंच जात । दस भेद भवनवासी विख्यात ।।
पुनि आठ जातके वान देव । सब आये इन्द्र समेत एव ।२९।।
निज निज बाहन चढ़ि सपरिवार । जिनजन्म-महोच्छवहियँधार
तब पुरप्रदच्छिना सुरन दीन । अतिहरखत उर जयकार कीन ।
बन बीथी[1] मारग गगन रोक । सब ठाड़ दैवी देव थोक ।।
सब सक्र सची मिलि भूप गेह । आये घर आंगन भरो तेह ।३१
तब इंद्रबधू अति रंजमान[2] । सो गई गुपत जिनजनमथान ।।
देखी जिनमात सपुत्त[3] ताम । परदच्छिन दै कीनौं प्रनाम ।३२
सुत-रागरँगी सुखसेजमांझ । ज्यों बालक-भानुसमेत सांझ ।।
कर जोरि जुगल सिर नाय नाय । थुति कीनी बहु जानै न माय
सुखनींद रची तब सची तास । मायामय राख्यौ पुत्र पास ।।
करकमलन बालक-रतन लीन । जिन कोटिभानुछबि छीन कीन
सुख उपजै जो प्रभु परस देह । कवि-बानीगोचर नांहि तेह ।
प्रभुकौ मुखवारिज[4] देख देख । हरखै सुररानी उर विसेख ३५

१. गली २. आनन्दित होकर ३. पुत्रसहित ४. कमल ।

वसु मंगलदरव विभूति सार। दिसदिव्यकुमारी अग्रचार ॥
इहिविध सौधर्मसुरेसनार। आन्यो सिवकन्या[1]वर कुमार ॥३८
देख्यौ हरि बालकचंद जाम। आनंदजलधि उर बढ्यौ ताम ॥
सिर नाय इंद्र निज बार बार। थुति कीनो कर जुग सीस धार ॥
छबि देखि तृपति नहिं होय लेस। तब सहस आंख कीनी सुरेस
करि नमस्कार निजगोद लीन्ह। ईसान इंद्र सिर छत्र दीन्ह ॥
तहां सनतकुमार महेंद्र सोय। ए चामर ढालैं इन्द्र दोय ॥
ब्रह्मादि सुरगवासी सुरेस। जय नंद वर्ध बोलैं विसेस ॥३९॥
नाचैं सुर-रमनी रूपखान। गंधर्व करैं जिनसुजसगान ॥
सुरबाजे बाजैं बहुप्रकार। कर धरहिं किन्नरी बीन सार ॥४०
केई सुर श्रीजिनसुभगभेष। देखैं भरि लोचन निनिमेष[2] ॥
केई यौं भाखैं सुरसमाज। हम देवजन्मफल लह्यौ आज ४१
केई सरधायुत भये देव। मिथ्यात महाविष वम्यौ एव ॥
इस भांति चतुरबिध देवसंघ। सब चले जोतिषोपटल लंघ[3] ॥

दोहा।

जोजन सहस निन्यानवै, सुरगिरि-सिखर उतंग।
गये सकल सुरगन तहां, भूषनभूषित अंग ॥४३॥

चौपई।

महामेरुके मस्तकभाग। पांडुकबन बहु धरै सुहाग[4] ॥
जोजन सहस जासु बिस्तार। सुर चारन खग करैं बिहार ॥४४
चहुंदिसि चार जिनालय तहां। सघन सासते तरुवर जहां।

१. मुक्तिरूपी कन्या २. अपलक ३. उल्लंघन करके ४. सौंदर्य।

मध्यचूलिका मुकट सरीस । सो उतंग जोजन चालीस ।।४५
बारह जोजन जड़ विस्तार । आठमध्य अर ऊपर चार ।।
जाके ऊपर रजकविमान । रोमांतर[1]नरछेत्रप्रमान ।।४६।।
तिस ईसानदिसा सुभ थान । मनिमय सिला सासती जान
पांडुकनाम फटिक उनहार । आकृति अर्ध चंद्रमाकार ।।४७।।
सौ जोजन आयाम[2] अभंग । विस्तर[3]आधो आठ उतंग ।।
सुरविद्याधर पूजत नित्त । भरतखंड-जिन-न्हौन-पवित्त ।।
तहां हेम-सिंहासन सार । रत्नजड़ित सो वलयाकार ।।
धनुष पांचसौ उन्नत जोय । भूमिभाग बिस्तीरन सोय ।।४९
ऊपर जास अर्ध बिस्तार । जाके तेज मिटं अंधियार ।।
तिसहीपर पदमासन साज । पूरबमुख थापे जिनराज ।।५०।।
इस औसर सोहैं इमि ईस । मानौं मेघ रतनगिरि सीस ।।
धुजा कलस दर्पन भृंगार[4]। चमर छत्र सुप्रतिष्ठक[5]तार[6] ।५१।।
मंगल दर्व मनोहर जहां । धरे अनादि-निधन ये तहां ।।
आसन दोय उभय दिस और । जुगलइंद्र ठाड़े तिंहि ठौर ।।५२
चारौं दिस चारौं दिगपाल । जथाजोग जिनमज्जनकाल[7] ।।
सची सुरेंद्र अपछरा-थोक[8] । सब ठाड़े पांडुकबन रोक ।।५३
चौबिध[9]देव खड़े चहुंपास । जनम-न्हौन देखन हुल्लास ।
कियौ महामंडप हरि तहां । तीनलोक जन निवसैं जहां ।।५४
कल्पकुसुममाला मनहार । लटकैं मधुप करैं झंकार ।।

१. एक बाल का अन्तर २. लम्बाई ३ चौड़ाई ४. कलश ५. साथिया ६. पखा ७ अभिषेक ८. समूह ९. चार प्रकार के देव (भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी, कल्पवासी)

सुर वाजित्र बजें बहुभाय। सुरभि[1] सुगंध रही महकाय।५५
मंगल मिल गावें सब सची। नाचें सुर-वनिता रस-रची।।
तब मज्जन आरंभ विसेस। उद्यम कियो प्रथम अमरेस[2] ५६

दोहा।

तहां कुबेर रतन खची[3], रची पैंडका पंत[4]।
मेरु सिखरसौं सोहिये, छीरोदधिपरजंत[5] ।।५७।।
सुर-श्रेणी सोपान-पथ, पंचम सागर जाय।
भर लाई कंचन-कलस, चंदन-चरचित काय ।।५८।।
जोजन एक प्रमान मुख, वसु[6] जोजन गंभीर।
यह मरजादा कलसकी, जिनशासनमैं बीर ।।५९।।
मुकतमालमंडित लसैं, कचन-कलस महंत।
नभवनिताके[7] उरज[8] ये, यों अति सोभावंत ।।६०।।

चौपई

सहस[9] भुजा सुरपति तब करी। भूषनभूषित सोभा भरी।
इस औसर हरि सोहैं एम। भूषणांक सुरतरुवर जेम ।।६१।।
कलस हाथ हरि लीनें जाम। भाजनांग[10] सम सोभा ताम।
तीन बार कीनी जयकार। कलसोद्धारन मंत्र उचार ।।५१।।
इहिविध श्रीसौधर्माधीस। ढाले कलस स्वामिके सीस ।।
तब सब इंद्र कियो जिनन्हौन। अतुल उछाव बढ़यो जगभौन।

१. मनोरम २. सौधर्म स्वर्ग का इन्द्र ३. रत्न जड़ित ४. पंक्ति ५. पंचम समुद्र तक ६. आठ ७. आकाश रूपी स्त्री ८. स्तन ९. हजार १०. भाजन देने वाला कल्प वृक्ष।

महा धार जिनमस्तक ढरी । मानौं नभगंगा अवतरी ।।
मुदित असंख अमरगन तबै । जै जैकार कियो मिलि सबै ६४।
उपज्यौ अति कोलाहल सार । दसदिस बधिर[1] भई तिहिबार ।
भयौ असम[2] औसर इहि भाय । वचनद्वार बरन्यौ नहि जाय ।

दोहा ।

जा धारासौं गिरिसिखर, खंड खंड हो जाय ।
सो धारा जिनदेहपै, फूल-कली सम थाय ।।६६।।
अप्रमान बीरजधनी, तीर्थंकर प्रभु होय ।
तातै तिनकी सकतिकौं, उपमा लगै न कोय ।।६७।।
नीलबरन प्रभु देहपर, कलस-नीरछबि एम ।
नीलाचलसिर हेमके, बादल बरसै जेम ।।६८।।
चलो न्हौनके नीरकी, उछ्रन छटा नभमांहि ।
स्वामिसंग अघबिन[3] भई, क्यों नहि ऊरध जाहि ।६९।
न्हौनछटा तिरछीभई, तिन यह उपमा धार ।
दिगवनिता[4]-मुख सोहियै, करनफूल उनहार ।।७०।।

सोरठा ।

जिनतनपरस पवित्र, भई सकल जगसुचिकरन ।
सो धारा मम नित्त, पाप हरो पावन[5] करो ।।७१।।

चौपई ।

यों सुरेंद्र मज्जनबिधि ठान । फिर कीनौं गंधोदकन्हान ।।
सो जल लेय विनय विस्तरी । सांतिपाठ पढ़ि पूजा करी ।७२।

---

१. बहरी २. जिसकी समानता नहीं की जा सकती ३. निष्पाप ४. दिशा रूपी स्त्री ५. पवित्र ।

सक्र सची सुर आनन्द भरे । यथाजोग सब कारज करे ।
परदच्छिन[1] दीनी बहु-भाय । बारंबार नये सिरनाय ।।७३।।

हरिगीत ।

सौधर्मपति अभिषेक कारक, न्हौनपीठ[2] सुदंसनो[3] ।
गंधर्व गायक निरतकारक, अपछरा-जन संसनो[4] ।।
पंचम पयोनिध न्हौन-कुंड, असंख सुर सेवक जहां ।
तिस जन्ममंगलकी बड़ाई, कहन समरथ बुध कहां ।।७४।।

चौपई ।

जन्महौनबिधि पूरन भई । सकल सुरासुर देवनि ठई ।।
अब इंद्रानी जिनवर अंग । निर्जल[5] कियो वसन[6]-सुचिसंग।७५।
कुंकुमादि लेपन बहु लिये । प्रभुके देह विलेपन किये ।।
इहि सोभा इह औसरमांझ । किधौं नीलगिरि फूली सांझ।७६
और सिंगार सकल सह कियो । तिलक त्रिलोकनाथके दियो।
मनिमय मुकुट सची सिर धरचौ । चूडामनि माथे विस्तरचो७७
लोचन अंजन दियो अनूप । सहज स्वामिदृग अंजितरूप ।।
मनि कुंडल कानन विस्तरे । किधौं चन्द्र सूरज अवतरे ।७८।
कंठ कंठिका[7] मोतीहार । मुक्तिरमनि झूला उनहार ।।
भुजभूषनभूषित भुज करो । कटक मुद्रिका सोभित खरो।७९।
कटिभूषन कीनौं कटि-थान । मनिमयक्षुद्रघंटिकावान ।।
पग नेवर पहराये सार । जिनमें रतन झलक झंकार ।।८०।।

---

१. परिक्रमा २. स्नान का सिंहासन ३. सुदर्शन मेरु ४. प्रशंसा ५. शरीर को सुखाया ६. वस्त्र ७. कंठी ।

दोहा ।

अंगअंग आभरनजुत[1], यह उपमा तिहिं काल ।।

सुरतरुसम प्रभु सोहिये, भूखनभूषित-डाल[2] ।।८१।।

चौपई ।

तब इंद्रादि लगे थुति करन । जय जिनवर सब आरत[3]-हरन
त्रिभुवनभवन दीप उनहार । धन्य देव तेरो अवतार ।।८२।।
जय श्रीअस्वसेनकुलचंद । वामानंदन जोति अमंद[4] ।।
सुखसागरके वर्धनहार । सब जग श्रेय[5]-सांति-दातार ।८३।।
तुम जग भ्रमनासन अवतरे । हमसे दास महासुख भरे ।।
बिन रविउदय तिमिर[6] क्यों जाय । कैसे कमलबाग बिकसाय
मिथ्यामत रजनी[7] अतिघोर । मूसै[8] धर्म कुलिंगी[9] चोर ।।
जो प्रभुजन्मप्रभात न थाय । तो किमि प्रजा बसै सुखपाय।८५
ये अनादि संसारी जीव । बिलखैं भव-गद[10]-ग्रसे अतीव ।।
सो दुखमैंटन दयानिधान । राजवैद जनमैं भगवान ।।८६।।
भरमकूपवरती बहु लोय[11] । काढ़नहार तिन्हैं नहिं कोय ।।
श्रीमुखवचननेज[12]-बलधार । अब उद्धार लहैं निरधार ।८७।
आप परमपावन परमेस । औरन कौं सुचि करहु विशेष ।।
ज्यों सरि[13] सेत[14] प्रभा तन धरैं । सेत सरूप सबनकी करैं८८
बिन सनान तुम निर्मल नित्त । अंतर बाहज सहज पवित्त ।।
हम मज्जनबिधि कीनी आज । निजपवित्रकारन जिनराज८९

१ आभूषण २. टहनी ३. दुःख ४ सदा जगने वाली ५. कल्याण ६. अंधकार ७ रात ८. चोर ९. खोटे भेषधारी १०. रोग ११ लोग १२. रस्सी १३. सरोवर १४. सफेद ।

तुम जगपति देवनके देव । तुम जिन स्वयंबुद्ध स्वयमेव ।।
तुम जगरच्छक तुम जगतात । तुम बिनकारन-बन्धु विख्यात।।
तुम गुनसागर अगम अपार । थुतिकर[1] कौन जाय जन पार।।
सूच्छम ग्यानी मुनि नहिं तरैं । हमसे मंद कहा बल धरैं ।६१।
नमो देव असरन-आधार । नमो सर्वअतिसयभंडार ।।
नमो सकलसिवसंपतिकरन । नमो नमो जिनतारनतरन ।६२।

दोहा ।

इहि विध इन्द्रादिक अमर, सुरपदवीफल लेय ।
जन्म-न्हौन-विधि कर चले, मानौं निज शुभ श्रेय ।।६३।।
जन्ममहोच्छव देख कर, सुरपतिकी परतीत[2] ।
बहु सुर सरधानी भये, तजि सरधा विपरीत ।।६४।।

चौपई ।

तब सब देव जनमपुरथान । पूरवली विधि कियौ पयान[3] ।।
चढ़्यौ इन्द्र ऐरावत शीश । गोद लिये त्रिभुवनपतिईस ।६५।
पूरबवत दुंदभि धुनिगाज । वे ही गीत निरत सब साज ।।
आये जय जय करत असेस । पिताभवन कीनौं परवेस ।६६।
मनिमय आंगनमैं हरि आप । हेम-सिंहासन पर प्रभु थाप ।।
अस्वसेनभूपति तिहिं बार । देख्यौ नंदन[4] नयन पसार ।६७।
तेजपुंज निरुपम छवि देह । रोमांचित तन बढ़्यौ सनेह ।।
माया नींद सची तब हरी । जिनजननी[5] जागी सुखभरी ।६८
भूषनभूषित कांति विसाल । भर लोयन निरख्यौ जिनबाल ।।

१. स्तुति करके, २. विश्वास. ३. गमन, ४. पुत्र, ५. जिनमाता ।

अति प्रमोद उर उमग्यौ तबै । पूरन भये मनोरथ सबै ।९९।
तब सुरेस रोमांचितकाय । मात पिता पूजे मन लाय ।।
भूषन बसन भेंट बहु धरी । हाथ जोरि जुग थुति[1] विस्तरी१००
तुम जगमैं उदयाचल भूप । पूरबदिसि देवी सुचिरूप ।।
उदय भये त्रिभुवनरवि जहां । तुम महिमा बरनन बुधि कहां
धनि धनि अस्वसेन भूपाल । जिनके जगगुरु[2] जनम्यौ बाल।।
कीरतबेल अधिक तुम बढ़ी । तीनलोकमंडप सिर चढ़ी ।१०२
धनि वामादेवी जगमाय । जिन जायौ नंदन जगराय ।।
तीनलोकतिय-[3]सृष्टिसिंगार । धनि जननी तेरो अवतार ।१०३
तुम सम जगमैं और न आन । जिनदेवल[4] सम पूज्य प्रधान ।।
यौं थुतिकरि हरि[5] हिये प्रमोद[6] । बाल दिवाकर दीनौं गोद
कही सकल पूरबली कथा । मेरु महोच्छव कीनौं जथा ।।
तब निज नगरविषै भूपाल । जन्म उछाह कियौ तिहिंकाल ।
हरषत सब पुरजन परिवार । घर घर भये मंगलाचार ।।
घर घर कामिनि[7] गावैं गीत । घर घर होंय निरत-संगीत१०६
मंगलीक बाजे बहु भेव । बाजन लगे सकल सुखदेव ।।
श्रीजिनभवन न्हौन विस्तार । किये सकल मंगल आचार ।।
छिरक्यौ चंदन नगरमंझार । रतन साथिया धरे संवार ।।
जाचक-दान सुजन-सनमान । जथाजोग सब रीति-विधान ।।
इहि बिध अस्वसेन नरनाह । कीनौ पुत्र-जनमउच्छाह ।।
पूरनआस भये सब लोय । दुखी दीन दीखै नहि कोय ।१०९।

१. स्तुति २. संसार का गुरु ३. स्त्री ४. जिन मंदिर ५. इन्द्र, ६. आनंद ७. स्त्री

दोहा ।

उदय भयो जिनचन्द्रमा, कुलनभतिलक[1] महंत ।।
सुखसमुद्रबेला[2] तजी, बढ़्यो लोक-परजंत ।।११०।।

चौपई ।

तब बहु देवनसंग बिसेस । आनन्द-नाटक ठयो सुरेस ।।
करैं गान गंधर्व-समाज[3] । समयजोग सब बाजे साज ।।१११।
देखैं अस्वसेन नरनाथ । पुत्रसहित सब परिजन साथ ।।
प्रथमरूप नव भव दरसाय । पुहपांजुलि[4] खेपी सुरराय ।।११२
तांडव नाम निरत आरंभ । कियौ जगतजन करन अचंभ ।।
नट सरूप धारयौ अमरेस । रंगभूमि कीनौं परवेस ।।११३
मंगलीक सिंगार संवार । सब संगीत वेद अनुसार ।।
ताल मान विधिसहित सुभाय । रंग-धरा पर फेरैं पांय ।।११४
करैं कुसुमबरसा नभ देव । देखि इंद्रकी भक्ति सुभेव ।।
बीना मुरज[5] बांसली[6] ताल । बाजे गेह गीतकी चाल ।।११५
करैं किन्नरी मंगलपाठ । बिरियां[7] जोग बन्यौ सब ठाठ ।।
नाचैं इन्द्र भमैं बहु भाय । मोरैं[8] हाथ कंठ कटि पाय ।।११६
अद्भुत तांडवरस तिहिं बार । दरसावैं जन अचरजकार ।।
सहस भुजा हरि कीनी तबै । भूषनभूषित सोहैं सबै ।।११७।
धारत चरन चपल अति चलैं । पहुमी[9] कांपैं गिरिवर हलैं ।।
भमैं मुकुट चकफेरी लेत । ताकी रतनप्रभा छबि देत ।।११८।

१. आकाश कुल का तिलक २. सीमा ३. समूह ४. पुष्पांजलि ५ मृदंग
६ बांसुरी ७. काल ८. मोड़ै ९. पृथ्वी ।

बलयाकृति[1] ह्वै झलकै सोय। चक्राकार अगनि जिमि होय।
छिनमैं एक छिनक बहुरूप। छिन सूच्छम छिन थूलसरूप।११६।
छिनमैं निकट दिखाई देय। छिनमैं दूर देह धर लेय।।
छिनआकासमांहि संचरै। छिनमैं निरत भूमि पर करै।१२०।
छिन छूवै तारावलि जाय। छिनक चंदसौं परसै काय।।
इंद्रजालवत[2] यों अमरेस। दरसाई निज रिद्धिविसेस।१२१।
हाथ अंगुलिनपै अपछरा। नाचै रूप रतनकी धरा।।
अंग अंग भूषन झलकांहि। बिकसत लोचन मुख मुसकांहि।
निरत-भेदबिधि धारैं पांव। करैं कटाच्छ दिखावैं भाव।।
बहुविधकला प्रकासैं सार। सुरकामिनि[3] दामिनि[4]उनहार१२३
तिनसंजुत[5] हरि सुरतरु एम। कलपलतागनबेढ्यौ[6] जेम।।
यों नाटकबिधि ठान अनूप। तिहुंजग सक्र[7] किये सुखरूप१२४
स्वामिजनम-अतिसयपरताप। जिनवरपिता सभापति आप।
इन्द्र महानट नाचै जहां। तिस अवसर-बरनन बुधि कहां।।
तब तहां मातपिताकी साख। पारस नाम सकल सुर भाख।
राखि सुरासुर सेवा-जोग। चले देव सब साधि नियोग।१२६।

दोहा।

इहिबिध इन्द्रादिक अमर, जन्मकल्यानक ठान।
बहुबिध पुन्य उपायकं, पहुँचे निज निज थान।।१२७।।

---

१. गोल २. जादू ३. देवाङ्गना ४. बिजली की तरह ५. उन सहित ६. कल्प बेलि से लिपटा हुआ ७. इन्द्र।

हरिगीति ।

इन्द्रादि जन्मसनान जिनकौ, करन कनकाचल[1] चढ़े ।
गंधर्व देवन सुजस गायौ, अपछरा मंगल पढ़े ।।
इहविध सुरासुर निज नियोगँ, सकल सेवाबिधि ठई ।
ते पासप्रभु मुझ आस पुरवो, सरन सेवकने लई ।।१२८।।

इति श्रीमत्पार्श्वपुराणभाषायां जिनेन्द्रजन्मोत्सववर्णनं
नाम षष्ठमाधिकारः ।

सातवां अधिकार

दोहा ।

पारस प्रभु तजि औरकौं, जे नर पूजन जाहिं ।
कलपबिरछकौं छांड़िकें, बैठें थूहर[2] छांहि ।।१।।

चौपई ।

अब जिन बालचन्द्रमा बढ़ें । कोमल हास-किरन मुख कढ़ें ।।
छिन छिन तात-मात-मन हरें । सुखसमुद्र दिन दिन विस्तरें।२।
अमृत इन्द्र अंगूठे देय । वही पोष[3] पयपान[4] न लेय ।।
देवी धाय[5] हरष मन धरें । मज्जनमंडन[6] बिधि सब करें ।३।
केई मनिभूषन पहराय । करें अलंकृत प्रभुकी काय ।।
केई कामिनि करें सिंगार । श्रीमुखचन्द्र निहार निहार ।४।

---

१. सुमेरु पर्वत २ थोर=कांटेदार झाड़ ३. पोषण योग्य ४. दूध पीना ५. बच्चे को पालने वाली माता ६. शृङ्गार ।

केई रहसवती[1] तिय आय । हस्त कमलसौं लेय उठाय ।।
मनिमय आंगनमांझ अनूप । बिचरैं जिनपति बालसरूप ।५।
बहुविध देवकुमार मनोग । बालकरूप भये वयजोग[2] ।।
घुटियां[3] गमन करैं तिनसाथ । ज्यों नछत्रगनमैं निसि-नाथ ।६।
कबहीं सैनासन सोवंत । ऊपर दिढ़ जिन यौं जोवंत[4] ।।
अजों मुक्ति मो केतक[5] परैं[6] । मानौं यह संका मन धरैं ।।७।।
कबहीं पुहुमोपै[7] जिनराय । कंपित चरन ठवैं इहि भाय ।।
सहै कि ना धरती मुझभार । संकैं उर उपमा यह धार ।८।
कबहीं स्वामि उझकि उठि चलैं । विकसत मुख सब दुखकौं दलैं।
बांधे मुठी अटपटे पाय । कैसे वह छवि बरनी जाय ।।९।।
कबहीं रतन-भीतमैं रूप । झलकैं ताहि गहैं जगभूप ।।
जिनसौं जिन[9] न मिलैं सर्वथा । करत किधौं कहवत[10] यह वृथा
कबहीं रतन-रेत कर लेत । करैं केलि सुरकुमरसमेत[11] ।।
कबहिं माय बिन रुदन करेय । देखैं फेरि विहंसि हंस देय।११
कबहीं छोड़ि सचीकी गोद । जननी-अंक जाय मनमोद ।।
मातासौं मानैं अति प्रीति । बाल अवस्थाकी यह रीति ।१२।
यौं जिन बालकलीला करैं । त्रिभुवनजनमनमानिक हरैं ।।
क्रमसौं बालभारती[12] नाम । श्रीमुखकमल लसी अभिराम ।१३।
अनुक्रम भई अंगबढ़वार । तब त्रिभुवनपति भये कुमार ।।

---

१. रहस्य की ज्ञाता २. उम्रयोग्य ३. घुटनों के बल चलना ४. देखना ५. कितनी ६. दूर ७. पृथ्वी ८. उचककर ९. तीर्थङ्कर १०. कहावत ११. देव बालक १२. बालक वाणी ।

निरुपम कांति कला विग्यान । लावन रूप अतुलगुनथान।१४।
मति-श्रुति-अवधि-ग्यानबल देव । जानैं सकल चराचर भेव ।
सोमसुभाव[1] सहज उपसंत । निर्मल छायकदरसनवंत ।।१५।।
इहिविध आठबरसके भये । तब प्रभु आप अनुव्रत लये ।।
देवकुमार रहैं संग निस्त । ते छिन छिन रंजैं जिन-चित्त ।१६।
कबहीं गज तुरंग[2] तन धरैं । तिनपै चढ़ि प्रभु जनमन हरैं ।।
कबहीं हंस मोर बन जांहि । तिनसौं जगपति केलि कराहिं।१७।
कबहीं जलक्रीड़ाथल गमैं । कबहीं बनबिहारभू रमैं ।।
कबहीं करैं किनरी गान । सो प्रभु सुजस सुनैं निज कान ।१८।
कबहीं निरत ठवैं[3] सुर-नार । देखैं जिन लोचनसुखकार ।।
कबहीं काव्यकथारस ठान । करैं गोठ[4] जिन बुधि बलवान।१९।
बिना सिखाये बिन अभ्यास । सब विद्या सब कलानिवास ।
यों सुखअनुभव करत महान । भये पास जिन जोबनवान।२०।

दोहा ।

संपूरन जोवन समय, प्रभुतन सोहै एम ।।
सहजमनोहर चांदकी, सरदसमय छबि जेम ।।२१।।

चौपई ।

प्रभुके अंग पसेव न होय । सहज सदा मलवरजित[5] सोय ।।
उज्जलवरन रुधिर जिमि खीर[6]। सुसमचतुरसंठान[7] सरीर।२२।
प्रथम सारसंहननसरूप[8] । इन्द्र-चन्द्र-मनहरन अनूप ।।

---

१. सौम्य स्वभाव २. घोड़ा ३. करैं ४. गोष्ठी ५ शरीर मल रहित ६. दूध ७ सर्वांग सुन्दर ८. वज्रवृषभनाराच संहनन ।

बिनाहेत तन सहज सुवास । प्रियहितवचन मधुर मुख जास ।
अतुलदेह बल धरत महान । सहस[1] अठोतर लच्छनवान ।।
तिनके नाम लिखौं कछु जोय । पढ़त सुनतसुखसंपति होय२४

हरीगीत

श्रीवच्छ[2] संख सरोज[3] स्वस्तिक, सक्र चक्र सरोवरो ।
चामर[4] सिंहासन छत्र तोरन, तुरगपति[5] नारी नरो ।।
सायर[6] दिवायर[7] कल्पबेली, कामधेनु धुजा करी ।
वरवज्रवान कमान कमला[8], कलस कच्छप केहरी ।।२५।।
गंगा गऊपति[9] गरुड़ गोपुर, बेणु बीणा बीजना[10] ।
जुगमीन[11] महल मृंदगमाला, रतन दीप दिपै घना ।।
नागेंद्र-भुवन विमान अंकुस, बिरछ सिद्धारथ सही ।
भूषन पटंबर हट्ट हाटक[12], चन्द्रचूड़ामनि कही ।।२६।।
जम्बू तरोवर नगर सूबस[13] बाग जनमनभावना ।
नौनिधि नक्षत्र सुमेरु सारद, साल[14] खेत सुहावना ।।
ग्रह मंगलाष्टक प्रातिहारज, प्रमुख और विराजहीं ।
परमित अठोतर सहस प्रभुके, अंग लच्छन छाजहीं ।।२७।।
अंतर अनंती अतुल महिमा, कथन दूर रहो कहीं ।
बहिरंग गुनथुति करन जगमैं, सक्रसे समरथ नहीं ।।
अब और जनकी कौन गिनती, दीन पार न पावना ।

---

१. एकसौ आठ २ वक्षस्थल पर चिह्न विशेष ३. कमल ४. चंवर ५. घोड़ा ६. सागर ७ सूर्य ८ लक्ष्मी ९. सांड १० पंखा ११. दो मछलियां १२. सोना १३ अच्छी तरह बसा हुआ १४. चावल ।

पर पासप्रभुकी सुजसमाला, पहिरि दास कहावना ।।२८।।

दोहा ।

सहस अठोतर लच्छन ये, सोभित जिनवरदेह ।
किधौं कल्पतरुराजके, कुसुम विराजत येह ।।२९।।

चोपई ।

शुभ परमानूमय जिन अंग । नीलबरन नौ हाथ उतंग ।।
छबि बरनत बहि पावै ओर । त्रिभुवनजनमनमानिकचोर।३०
सतसंवत्सर[1] आव[2] प्रमान । अतुल असाधारन गुनथान ।।
सत्रुमित्रऊपर समभाव । दयासरोवर सोमसुभाव ।।३१।।
सागरसौं प्रभु अति गंभीर । मेरुसिखरसौं अधिकै धीर ।।
कांति देखि लाजै मिरगांक[3] । तेज बिलोकि छिपै रवि रांक[4]।।
कल्पविरछसौं अधिक उदार । तिहुँजगआसापूरनहार ।।
यौं जिनगुनकौं उपमा कहीं । तीनकाल त्रिभुवनमैं नहीं ।३३।

दोहा ।

यौं सुख निवसत पास जिन, सेवत कमला पाय ।
सोलह बरस प्रमान प्रभु, भये जगतसुखदाय ।।३४।।
सभासिंहासन एक दिन, बैठे सहज जिनेन्द्र ।
सुरनरमैं प्रभु यौं दिपै, ज्यौं उडगनमैं[5] चन्द्र ।।३५।।
अस्वसेन भूपाल तब, बोले अवसर पाय ।
नेहसलिल[6] भीजे वचन, सुनो कुमर जगराय ।।३६।।
एक राजकन्या बरो, करो उचित व्यवहार ।

---

१ सौ वर्ष २. आयु ३. चन्द्रमा ४. गरीब ५ तारों में ६. प्रेमजल ।

बंसबेल आगे चलै, सुख पावै परिवार ॥३७॥
नाभिराजकी आस ज्यौं, भरी प्रथम अवतार ।
तथा हमारो कामना, पूरन करो कुमार ॥३८॥
पितावचन सुनि प्रभु दियो प्रतिउत्तर तिहिं बार ।
रिषभदेव सम मैं नहीं, देखौ हिये विचार ॥३९॥
मेरी सब सौ वर्ष थिति, सोलह भये बितीत ।
तीस वर्ष संजम समय, फिर मत कहो पुनीत ॥४०॥
अल्पकालथिति अल्प सुख, अल्प प्रयोजनकाज ।
कौन उपद्रव संग्रहै समुझि देख नरराज ॥४१॥
सुन नरेंद्र लोचन भरे, रहे वदन[1] विलखाय[2] ।
पुत्रव्याहवर्जनवचन[3], किसे नहीं दुखदाय ॥४२॥

चौपई ।

इहिविध मंदराग जिनराय । निवसैं सबजोवनसुखदाय ॥
पूरबकथित कमठचर सोह । पाप करत मानो नहिं चीह।४३।
मुनिहत्यावस दुर्गति गयो । पंचमनरकवास सो लयो ॥
सत्रहजलधि[4] तहां दुख सहे । वचन द्वार जो जाहिं न कहे ।४४।
थिति पूरन कर छोड़ी ठौर । सागर तीन भम्यो फिर और ।
पसुगतिमांहि विपत बहु भरी । त्रसथावरकी काया धरी।४५।
इहिविध भयो पाप अवसान[5] । काहू जन्मक्रिया सुभ ठान ।
महीपालपुर सोहै जहां । महीपालनृप उपज्यो तहां ॥४६॥
पारसप्रभुकी वामा माय । इनको पिता भयो यह राय ॥

१. मुख २. रोना ३. पुत्र के विवाहका मना कर देना ४. सत्रह सागर ५. अंत

पटरानीके प्रानवियोग । उपज्यौ विरह बढ्यौ चित सोग।४७।
तपसी भेष धर्यौ दुख मान । पंचागनि साधै बनथान ।।
सीस जटा मृगछाला संग । भसम पोस लाई सब अंग ।।४८।।
भ्रमत बनारसिके उद्यान । आयौ कष्ट करत बिनग्यान ।।
इहि अवसर श्रीपार्श्वकुमार । गये सहज बन करन बिहार।४६।
राजपुत्र बहु सुरगन साथ । गज आरूढ़ दिपै जिननाथ ।।
कर सुछन्द बनकेलि[१] अनूप । चलै नगरकौं आनन्दरूप ।५०।
देख्यौ मगमैं जननी-तात[२] । तपै पंचपावक[३]-तप गात ।।
सो समीप प्रभुकौं अविलोय । चिंतै चित रोषातुर[४] होय।५१।
मैं तपसी कुलवंत महंत । जननी-पिता पूज सब भंत ।।
अहो कुमरके यह अभिमान । विनय प्रनाम करै नहि आन ।
इतने ईंधन कारन जान । लकडी चीरन लग्यौ अयान[५] ।।
हाथ कुल्हाड़ी लीनी जबै । हितमितवचन चये प्रभु तबै ।५३।
भो तपसी यह काठ न चीर । यामैं जुगल[६] नाग हैं बीर ।।
सुनि कठोर बोल्यौ रिस[७] आन । भो बालक तुम ऐसो ग्यान
हरिहर ब्रह्मा तुम ही भये । सकलचराचरग्याता ठये ।।
मनै करत उद्धत अविचार । चीरयौ काठ न लाई बार ।५५।
ततखिन[८] खंड भये जुगजीव । जैनी बिन सब अदय[९] अतीव ।
दयासरोवर जिन तब कहै । तपसी बृथा गरब तू बहै ।।५६।।
ग्यान बिना नित काया कसै । करुना तेरे उर नहि बसै ।।

१ बन क्रीड़ा। २. माता का पिता (नाना) ३. पंचाग्नि ४ क्रोधयुक्त
५. अज्ञानी ६. दो का जोड़ा ७ गुस्सा ८. तत्काल ६. दया रहित ।

तब सठ[1] रोषवचन फिर चयौ। जननो जनकर तपसी भयौ।
करैं न मदवस विनयविधान। और उलट खंडै मुझ आन॥
पंच अगनि साधूं तन-दाह। रहूं एकपद ऊरधबांह॥५८॥
भूख प्यास बाधा सब सहूं। सूखे पत्र पारनैं[2] गहूं॥
ग्यानहीन तप क्यों उच्चरैं। क्यों कुमार मुझ निंदा करैं॥५९॥
तब प्रभुवचन कहे हितकार। तुझ तपमैं हिंसाअघभार॥
छहों कायके जीव अनेक। नास होंहि नित नांहि विवेक॥६०॥
जहां जीवबध होय लगार। तहां पाप उपजै निरधार॥
पाप सही दुर्गति दुख देह। यातैं दयाहीन तप येह॥६१॥
ग्यान बिना सब कायकलेस। उत्तम फलदायक नहिं लेस॥
जैसे तुस[3] खंडन[4] कन छार। यों अजान तप अफल असार॥६२॥
अंधपुरुष बन[5]-दौमैं दहै। दौर[6] मरै मारग नहिं लहै॥
त्यों अजान उद्यम करि पचै। भवदावानलसौं नहिं बचै॥६३॥
ऐसे ही किरिया बिन ग्यान। सो भी फलदायक नहिं जान।
जथा पंगु लोचनबल धरै। उद्यमबिन[7] दावानल जरै॥६४॥
तातैं ग्यानसहित आचार। निहचैं वांछितफलदातार॥
इहिबिध जिनमतके अनुसार। करि उत्तम तप यह हठछार॥६५॥
मैं तुझ वचन कहे हितकार। तू अपने उर देखि विचार॥
भली लगै सोई करि मित्त[8]। वृथा मलीन करै मति चित्त॥६६॥

१ मूर्ख २. उपवास के पश्चात् का भोजन ३. भूसा ४. टुकड़े ५ बन की आग
६ दौड़ना ७ बिना पुरुषार्थ ८. मित्र।

दोहा।

नाग जुगल सुनि जिनबचन, क्रूरजीव अति निंद।
देह त्यागि ततखिन भये, पदमावति धरनिंद ॥६७॥
नाग जुगल[1] के भागकी, महिमा कही न जाय।
जिनदरसन प्रापति भई, मरन समय सुखदाय ॥६८॥

चौपई।

घर आये श्री पार्सजिनन्द। सुरनरनेत्रकमलिनीचन्द ॥
समय पाय तपसी तजि देह। भयौ जोतिषी संवर तेह ॥६९॥
देखो जगमैं तपपरभाव। ग्यान बिना बांधी सुरआव[2] ॥
जे नर करैं जैनतप सार। तिन्हैं कहा दुर्लभ संसार ॥७०॥
स्वामी मगन सुखोदधिमांहि। हर्ष विनोद करत दिन जांहि।
प्रभुके इष्ट-वियोग न होय। सोगसंजोग न कबहीं कोय ॥७१॥
वायपित्तकफजनित विकार। सुपनं होय न सोच विचार ॥
जरा न व्यापै तेज न जाय। ना मुखकमल कभी कुम्हलाय ७२
होहि नहीं दुखकारन आन। पुन्यउदधिबेला भगवान ॥
यों सुखभोग करत दिन गये। तब जिन तीस वर्षके भये ॥७३॥
नृप जयसेन अजुध्याधनी। भक्ति प्रीत प्रभुसौं अति घनी।
तुरगादिक बहु वस्तु अनूप। पठई[3] विनय वचन कहि भूप ७४
राजदूत चलि आयौ तहां। सभा थान जिन बैठे जहां ॥
हेमासन पर सोहैं एम। हिमगिरिसिखर स्यामघन जेम ॥७५॥
देखि दूत रोमांचित भयौ। बहुबिध चरन कमलकौं नयौ।

---

१. युगल २. देव आयु ३. भेजी।

मान्यौ सफलजन्म निजसार । त्रिभुवनपति परतच्छ[१] निहार७६
धरी भेंट जो राजा दई । विनय प्रनाम बीनती चई[२] ।।
तब पूछै तहां त्रिभुवनधनी । संपति नगर अजोध्यातनी ।।७७।।
कहै दूत कर जुग[३] सिर धार । बरनै तीर्थंकर अवतार ।।
मोख गये बरनै तिहिठाम । सुनि स्वामी चितै उर ताम ।।७८।।

बेली चाल ।

सुनि दूत वचन बैरागे । निज मन प्रभु सोचन लागे ।।
मैं इन्द्रासन सुख कीनै । लोकोत्तम भोग नवीनै ।।७९।।
तब तृपति भई तहां नाहीं । क्या होय मनुषपदमाहीं ।।
जो सागरके जलसेती । न बुझी तिसना[४] तिस एती ।।८०।।
सो डाभ[५]-अनीके पानी । पीवत अब कैसे जानी ।।
ईंधनसौं आगि न धापै । नदियौं नहिं समुद समापै[६] ।।८१।।
यों भोगविषै अतिभारी । तृपते न कभी तनधारी[७] ।।
जो अधिक उदय ये आवैं । तौ अधिकी चाह बढ़ावैं ।।८२।।
जो इनसौं तृपति विचारै । सो वैसानर[८] घृत डारै ।।
इन सेवत जो सुख पावै । सो आकौं[९] आंब[१०] उम्हावै ।।८३।।
ये भीम भुजंग सरीखे । भ्रम-भाव-उदय सुभ दीखे ।।
चाखतहीके मुख मीठे । परिपाक[११] समय कटु दीठे ।।८४।।
ज्यों खाय धतूरा कोई । देखै सब कंचन सोई ।।
धिक ये इन्द्री-सुख ऐसे । विषबेल लगे फल जैसे ।।८५।।

१ प्रत्यक्ष २. कहा ३ दोनों हाथ ४. प्यास ५ डाभ का ऊपरी हिस्सा ६. भरै ७. शरीरधारी ८. अग्नि ९ आकड़े का पौधा १० आम ११. उदयकाल

इनही वस जीव अनादी। भव भाँवर[1] भ्रमत सवादी[2] ॥
इन ही बस सीख न मानै। नानाबिध पातक[3] ठानै ॥८६॥
थिर जंगम[4] जीव संघारै। इनके बस झूठ उचारै ॥
पर चोरीसौं चित लावै। परतिय संग सील गमावै ॥८७॥
परिग्रह-तिसना[5] विस्तारै[6]। आरंभ उपाधि विचारै[7] ॥
इत्यादि अनर्थ अलेखै[8]। करि घोर नरकदुख देखै ॥८८॥
ये ही सुखपर्वतकेरे। जग फोरन वज्र बड़ेरे ॥
ये ही सब दोषभंडारे। धन-धर्म-चुरानवहारे ॥८९॥
मोही जन मोहैं योंहीं। ये आदरजोग न क्यों हीं ॥
इनसौं ममता तज दोजै। पर त्यागत ढील न कीजै ॥९०॥
सामान पुरुष जग जैसे। हम खोये ये दिन ऐसे ॥
संजम बिन काल गमायौ। कछु लेखेमैं नहिं लायौ ॥९१॥
ममतावस तप नहिं लीनौं। यह कारज जोग न कीनौं ॥
अब खाली ढील न कीजै। चारित-चिंतामनि लीजै ॥९२॥

दोहा।

भोगविमुख[9] जिनराज इमि, सुधि कीनी सिवथान[10]।
भावैं बारह भावना, उदासीन हितदान ॥९३॥

चौपई।

द्रव्य सुभाव बिना जगमाहिं। परजै[11] रूप कछू थिर नाहिं ॥
तनधन आदिक दीखत जेह। कालअगनि सब ईंधन तेह ॥९४॥

---

१. संसार परिभ्रमण २. स्वाद लेनेवाला ३. पाप ४. त्रस ५. लालच ६. फैलावे ७. रोग-चिंता ८. बेहिसाब ९. उदास १०. मुक्तिस्थान ११. पर्याय

भववन भ्रमत निरंतर जीव । याहि न कोई सरन सदीव ।।
व्योहारैं परमेठी-जाप । निहचैं सरन आपकौं आप ।।९५।।
सूर[1] कहावै जो सिर[2] देय । खेत[3] तजै सो अपजस लेय ।।
इस अनुसार जगतकी रीति । सब असार सब ही विपरीत।।९६
तीनकाल इस त्रिभुवनमांहि । जीव-संगाती[4] कोई नांहि ।।
एकाकी सुख दुख सब सहैं । पाप पुन्य करनीफल लहैं ।।९७।।
जितने जग संजोगी[5] भाव । ते सब जियसौं भिन्न सुभाव ।।
नितसंगी[6] तन ही पर सोय । पुत्र सुजन पर क्यों नहिं होय
असुचि[7] अस्थि[8]-पिंजर तन येह । चामवसनबेढ़यौ[9] घिनगेह[10]।
चेतनचिरा[11] तहां नित रहै । सो बिन ग्यान गिलानि न गहै
मिथ्या अविरत जोग कषाय । ये आस्रवकारन समुदाय ।।
आस्रव कर्मबन्धको हेत । बन्ध चतुरगतिके दुख देत ।।१००।।
समिति गुपति अनुपेहा[12] धर्म । सहन परीषह संजम पर्म ।
ये संवरकारन निरदोख । संवर करै जीवकौं मोख ।।१०१।
तपबल पूर्वकरम खिर जांहि । नये ग्यानबल आवैं नांहि ।
यही निर्जरा सुखदातार । भवकारन-तारन निरधार ।१०२।
स्वयंसिद्ध त्रिभुवनथित जान । कटिकर[13] धरैं पुरुषसंठान[14]।
भ्रमत अनादि आतमा जहाँ । समकित बिन सिव होय न तहाँ ।

१. शूरवीर २. मस्तक कटावे ३. युद्ध क्षेत्र ४ साथी ५ संयोगी ६. सदा साथ रहने वाला ७. अपवित्र ८. हड्डियोंका पींजरा ९ चमड़े का कपड़ा लिपटा हुआ १०. घृणा का स्थान ११. चेतन रूपी पक्षी १२ अनुप्रेक्षा (बार बार चिंतन) १३. कटियों पर हाथ १४. पुरुष के आकार जैसा ।

दुर्लभ धर्म दसांग[1] पवित्त । सुखदायक सहगामी नित्त ।।
दुर्गति परत यही कर गहै । देय सुरग सिवथानक यहै।।१०४
सुलभ जीवकौं सब सुख सदा । नौग्रीवक ताईं संपदा ।।
बोधरतन दुर्लभ संसार । भवदरिद्रदुखमेटनहार ।।१०५।।
ये दस-दोय भावना भाय । दिढ़ वैरागि भये जिनराय ।।
देहभोग संसार सरूप । सब असार जान्यौ जगभूप ।।१०६।।
इतनैं लोकांतिक सुर आय । पुहपांजलि दे पूजे पाय ।।
ब्रह्मलोकवासी गुनधाम । देव रिषीश्वर जिनकौ नाम ।१०७
सब पूरवपाठी बुधवंत । सहज सोमसूरति उपसंत ।।
बनिताराग[2] हियैं नहिं बहैं । एकजनम धरि सिवपद लहैं१०८
तीर्थंकर जब विरकत[3] होय । हर्षवंत तब आवैं सोय ।।
और कल्यानक करैं प्रनाम । सदा सुखी निवसैं निजधाम।१०९
हाथ जोरि बोले गुनकूप[4] । थुतिवायक[5] अरु सिच्छारूप ।
धनिविवेक यह धन्य सयान[6] । धनि यह औसर दयानिधान ।।
जान्यौ प्रभु संसार असार । अथिर अपावन[7] देह निहार ।।
इन्द्रिय सुख सुपने सम दीस । सो याही विध है जगईश ११०
उदासीन असि[8] तुम कर[9] धरी । आज मोहसेना थरहरी ।
बढ्यौ आज सिवरमनि सुहाग । आज जगे भविजन सिरभाग
जग प्रमादनिद्रावस होय । सोवत है सुधि नाहीं कोय ।।
प्रभु धुनिकिरन पयासै[10] जबै । होय सचेत जगैं जन तबै ।।११२

१. दस अंगों वाला २ स्त्री प्रेम ३. विरक्त ४. कुआ ५. स्तुतिरूप वचन ६. समझदार ७. अपवित्र ८. तलवार ९. हाथ १०. प्रकाशित हो।

यह भव दुस्तर[1] पारावार[2] । दुखजलपूरित वार न पार ।।
प्रभु उपदेश पोत[3] चढ़ि धीर । अब सुखसौं जैहैं जन तीर।११४।
सिवपुरि पौर[4] भरमपट[5] जहां । मोह मुहर[6] दिढ़ कीनो तहां ।।
तुम वानी कूची कर धार । अब भवि जीव लहैं पयसार[7]।११५।
स्वयंबुद्ध बोधन-समरत्थ । तुम पर प्रतिबुध[8] वचन अकत्थ[9] ।।
ज्यों सूरज आगे जिनराज । दीप दिखावन है बेकाज ।।१६।।
हम नियोग औसर यह भाय । तातैं करैं बीनती आय ।।
धरिये देव महाव्रत भार । करिये कर्मसत्रुसंघार ।।११७।।
हरिये भरम तिमिर सर्वथा । सूझै सुरगमुकतिपथ जथा ।।
यों थुति करि बहुभाव दिढ़ाय । बारबार चरनन सिर नाय ११८
साधि नियोग[10] गये निजथान । लोकांतिक सुर बड़े सयान ।।
अब चौबिध इन्द्रादिक देव । चढ़ि निज निज बाहन बहुभेव ११९
हर्षित उर परिवारसमेत । आये तृतिय-कल्यानक[11] हेत ।।
सुर वनिता नाचैं रस भरीं । गावैं मधुरगीत किन्नरीं ।।१२०।।
बाजे विबिध बजैं तिस बार । करैं अमरगन जय जय कार ।
सोवन[12]-कलस भरे सुरराय । विमल छीरसागर-जल लाय १२१
हेमासन[13] थापे जिनराय । उच्छवसहित न्हौन-बिधि ठाय ।।
भूषन वसन सकल पहिराय । चंदनचर्चित कीनी काय ।१२२।
इस औसर प्रभु सोहैं एम । मोखबधूवर दूलह जेम ।।

१. कठिनता से तरनेयोग्य २. समुद्र ३. जहाज ४. पौल ५ किवाड ६. म्होर=सील ७. प्रवेश ८. उपदेश योग्य ९ बेकार १० नियम से होनेवाला कार्य ११ तप कल्याण १२. सोने के १३. स्वर्ण सिंहासन ।

कहि वैराग वचन जिन तबै । प्रतिबोधे[1] परिजन जन सबै ।।
अति हठसौं समझाई माय । लोचन भरे वदन विलखाय ।।
विमला नाम पालकी साज । आनो इन्द्र चढ़े जिनराज ।१२४
पहले भूमिगोचरी[2] राय[3] । सात पैंड़ लीनी सुखदाय ।।
फिर विद्याधर राजा रले । पैंड़ सात ही ते ले चले ।।१२५।
पीछैं इन्द्रादिक सुरसंघ । कांधै धरी चले पुर लंघ ।।
ना अति निकट न दीसै दूर । नभ मारग देखैं जन भूर ।१२६

दोहा ।

जिस साहबकी[4] पालकी, इन्द्र उठावनहार ।।
तिस गुनमहिमा-कथन अब, पूरन होउ अपार ।।१२७।।

चौपई ।

यों सुर नर हरषित भये । अस्व नाम वनमैं चलि गये ।।
बड़तरुतलै सिला सुभ जहां । कीनौं सचो[5] सांथिया तहां ।।
उतरे प्रभु अति उत्तम ठाम । सांत भयौ कोलाहल ताम ।।
सत्रुमित्र ऊपर समभाव । तिन-कंचन गिन एकसुभाव ।।१२९
सोमभाव[6] स्वामी उर धार । पटभूषन[7] सब दीनैं डार ।।
उदासीन उत्तरमुख भये । हाथ जोर सिद्धन प्रति नये ।।१३०
दुबिध परिग्रह तजि परमेस । पंच[8]-मुष्टि लोचे[9] सिरकेस ।।
सिवकामिनिकी दूती जोय । धरी दिगंबरमुद्रा सोय ।।१३१।

१. समझाये २. पृथ्वी पर चलने वाले ३. राजा ४. पदवीधारी पुरुष ५. इन्द्राणी ६. सौम्यभाव (रागद्वेष रहित) ७. वस्त्राभूषण ८. पांच मुट्ठी ९. उखाड़े ।

दोहा ।

सोहै भूषन वसन बिन, जातरूप[1] जिनदेह ।।
इन्द्र नीलमनिकौ किधौं, तेजपुंज सुभ येह ।।१३२।।
पोह[2] प्रथम एकादसी, प्रथम पहर सुभ बार ।।
पद्मासन श्रीपार्श्वजिन, लियौ महाव्रतभार ।।१३३।।
और तीनसै छत्रपति, प्रभुसाहस अविलोय ।।
राज छारि संयम धर्यौ, दुखदावानल-तोय[3] ।।१३४।।
तब सुरेस जिनकेस सुचि, छीरसमुद पहुँचाय ।।
कर थुति साधनियोग सब, गयौ सुरग सुरराय ।।१३५।।

चौपई ।

अब स्वामी बनथान मनोग । तेला[4] थापि दियौ जिन जोग ।।
अट्ठाईस मूलगुन भाख । उत्तरगुन चौरासी लाख ।।१३६।।
सब प्रभु धरे परम समचेत[5] । अचल अंग मुख मौनसमेत ।।
यों बन बसत उपन्यौ ज्ञान । संजमबल मनपर्जयग्यान १३७

सोरठा ।

लघु वयमैं[6] जगपाल, कियौ निबीरज[7] कामदल[8] ।।
धीरज धनुष संभाल, तिनके पदनीरज[9] नमूं ।।१३८।।

इति श्रीपार्श्वपुराणभाषायां भगवद्वैराग्यप्राप्तदीक्षाकल्याणकवर्णनं नाम सप्तमोऽधिकारः ।

---

१. नग्न २. पौष ३. जल ४. तीन दिन के उपवास ५. समान चित्तवाले ६ उम्र में ७ शक्तिहीन ८. कामदेव की सेना ९. चरणकमल ।

आठवाँ अधिकार

सोरठा।

जाप्रभुकौ जसहंस[1], तीनलोक पिंजरें बसै ॥
सो मम पाप विधंस, करौ पास परमेस नित ॥१॥

चौपई।

अब जिन उठे जोग-अवसान । देहहेत उद्यम उर आन ॥
परमउदास अधोगत[2] दीठ[3] । सहजसांतमुद्रा मनईठ[4] ॥२॥
दया-नीर-निर्मल-परवाह । गुलर-खेटपुर पहुंचे नाह[5] ॥
लाभ अलाभ बराबर धार । निर्धन धनकौ नाहि विचार ॥३॥
ब्रह्मदत्त भूपति बड़भाग । प्रभुकौं देखि बढ्यौ उरराग ॥
उत्तमपात्र सकलगुनधाम । करि प्रनाम पड़िगाहे ताम ॥४॥
हेमासन थाप्यौ नरराय । प्रासुक जल परछाले[6] पाय ॥
आठभांति पूजा विस्तरी । हाथ जोर अंजुलि सिर धरी ॥५॥
मन-तन-वायक[7] सुद्धसरूप । नौ दातागुनसंजुत भूप ॥
सुद्ध अन्न दीनौं परवीन । प्रासुक मधुर दोषदुखहीन ॥६॥
उत्तमपात्र दानविधि करी । तीनभवन कीरति विस्तरी ॥
पंचाचरज भये नृपधाम । फिर स्वामी आये वन-ठाम ॥७॥
करें घोर तप साधैं जोग । दरसन करत मिटैं सब सोग ॥
अचल अंग मुख सोहै मौन । एकचित्त निजपद चितौन[8] ॥८॥

---

१. कीर्ति रूपी हंस २. नीचे देखना ३. दृष्टि ४ मन को भाने वाली ५. नाथ ६. धोये ७. वचन ८. चिंतन ।

ज्यों समुद्रजल विगतकलोल[१] । अथवा सुरगिरिसिखर अडोल ।
तथा नीलमनि-प्रतिमा येह । यों अकंप राजै जिनदेह * ॥९॥

चौपई ।

वैर भाव छांड्यो वन जीव । प्रीत परस्पर करैं अतीव ॥
केहरि आदि सतावैं नाहिं । निर्विष भये भुजग बनमाहिं ॥१०॥
सील सनाह[२] सजो सुचिरूप । उत्तरगुनआभरन[३] अनूप ॥
तपमय धनुष धर्यो निजपान । तीन रतन ये तीखनवान ॥११॥
समताभाव चढ़े जगसीस । ध्यान कृपान लियौ कर ईस ॥
चारित-रग-महीमैं धीर । कर्मसत्रुविजयी वरबीर ॥१२॥

दोहा ।

स्वामीकी सबपर दया, सबहीके रछपाल[४] ।
जगविजयी मोहादि रिपु, तिनके प्रभु छयकाल[५] ॥१३॥

सोरठा

देखो पौन[६] प्रचंड[७], दूब न खंडै दूबरी[८] ।
मोटे बिरछ[९] विहंड[१०], बड़े बड़ो ही बल करैं ॥१४॥

---

* उक्तं च—
नोकिञ्चित्करकार्य्यमस्ति गमनप्राप्यं न किञ्चिद्दृशो—
र्दृश्यं यस्य न कर्णयोः किमपि हि श्रोतव्यमप्यस्ति न ।
तेनालम्बितपाणिरुज्झितगतिर्नासाग्रदृष्टी रहः ।
सम्प्राप्तोऽतिनिराकुलो विजयते ध्यानैकतानो जिनः ।

---

१. लहर रहित २. साथ ३. आभूषण ४. रक्षक ५. क्षय करने वाला काल
६. हवा ७ तेज ८. कमजोर ९. वृक्ष १०. खंडित करना ।

दोहा।

यों दुद्धर तप करत अति, धर्मध्यानपदलीन ।।
चार मास छदमस्त[1] जिन, रहे रागमलहीन ।।१५।।

चौपई।

एक दिवस दीच्छावन जहां। जोगलीन प्रभु निवसैं तहां ।।
काउसग्ग[2] तन विगतविरोध। ठाड़े जिनवर जोगनिरोध ।।१६
संवर नाम जोतिषी देव। पूरवकथित कमठचर एव ।।
अटक्यौ अंबर[3] जात विमान। प्रभु पर रह्यौ छत्रवत आन।।१७
ततखिन[4] अवधिग्यानबल तबै। पूरव बैर संभालो सबै ।।
कोप्यौ अधिक न थांभ्यौ जाय। राते[5] लोयन[6] प्रजुली[7] काय[8]।।
आरंभ्यौ उपसर्ग महान। कायर देखि भजैं भयमान ।।
अंधकार छायौ चहुंओर। गरज गरज बरखैं घन घोर ।।१९।।
झरै नीर मुसलोपम धार। वक्र[9] बीज[10] झलकै भयकार ।।
बूड़े गिरि तरुवर बनजाल। झंझा वायु बही विकराल ।।२०।।
जल थल भयौ महोदधि[11] एम। प्रभु निवसैं कनकाचल[12] जेम।।
दुष्ट विक्रियाबल अविवेक। और उपद्रव करे अनेक ।।२१।।

छप्पय।

किलकिलंत बेताल[13], काल कज्जल[14] छबि सज्जहिं।
भौं कराल विकराल, भाल मदगज जिमि गज्जहिं ।।

१. केवलज्ञान के पूर्व की दशा, २. कायोत्सर्ग ३. आकाश ४. इसी समय ५. लाल ६. आंखें ७. जली ८. शरीर ९. टेढी १०. बिजली ११. समुद्र १२. सुमेरु १३. व्यंतरदेव १४. काजल के समानकाले।

मुंडमाल[1] गल धरहिं, लाल लोयननि डरहिं जन ।
मुख फुलिंग[2] फुंकरहिं, करहिं निर्दय धुनि हन हन ।।
इहि विध अनेक दुर्भेष[3] धरि, कमठजीव उपसर्ग किय ।
तिहुंलोकवंद जिनचंद्रप्रति, धूलि डाल निज सीस लिय ।।२२

दोहा ।

इत्यादिक उतपात सब, वृथा भये अति घोर ।
जैसे मानिक दीपकौं, लगै न पौन झकोर ।।२३।।
प्रभु चित चल्यौ न तन हल्यौ, टल्यौ न धीरज ध्यान ।
इन अपराधी क्रोधवस, करी वृथा निज हान ।। २४ ।।
पावक[4] पकरै हाथसौं, अवसि[5] हाथ जलि जाय ।
परके तन लागै नहीं वाके पुन्यसहाय ।। २५ ।।
प्रानी विषयकषायवस, कौन कौन विपरीत ।
करत हरत कल्यान निज, जलौ जलौ यह रीत ।। २६ ।।
प्रभु अचिंत्य[6]-महिमा-धनी, त्रिभुवनपूजित-पाय ।
तिनके यह क्यों संभवै, सुर उपसर्ग कराय ।। २७ ।।
इहि विध जो कोई पुरुष, पूछै संसय राखि ।
ताके समुझावन निमित, लिखूं जिनागम साखि ।।।२८।।

चौपई ।

अवसर्पनि उतसर्पनि काल । होंहि अनंतानंत विसाल ।।
भरत तथा ऐरावतमांहि । रँहटघटीवत आवैं जांहि ।।२९।।

१. कटे शिरों की माला २. आग ३. खोटे भेष ४. अग्नि ५ अवश्य
६. चिंतन में न आने योग्य ।

जब ये असंख्यात परमान, बीते जुगम[1] खेत भू थान ।।
तब हुंडावसर्पनी एक । परै करै विपरीत अनेक ।। ३२ ।।
ताकी रीत सुनो मतिवंत । सुखमा-दुखमा कालके अंत ।
बरखादिकको कारन पाय । विकलत्रय[2] उपजै बहु भाय ।३३।
कलपबिरछ विनसैं तिहि बार । बरतै कर्मभूमि-व्योहार ।।
प्रथम जिनेस प्रथम चक्रेस । ताही समय होंहि इहि देश ।३४।
विजयभंग चक्रोको होय । थोड़े जीव जांहि सिवलोय ।।
चक्रवति विकलप विस्तरै । ब्रह्मवंसको[3] उतपति करै ।।३५।।
पुरुष सलाका चौथे काल । अट्ठावन उपजैं गुनमाल ।।
नवम आदि सोलह परजंत । सात तीर्थमैं धर्म नसंत ।।३६।।
ग्यारह रुद्र[4] जनम जहँ धरैं । नौ कलिप्रिय[5] नारद अवतरैं ।
सत्तम तेईसम गुनवर्ग । चरमजिनेश्वरको[6] उपसर्ग ।।३७।।
तीजे चौथेकालमंझार । पंचममैं दीसै बढ़वार ।।
विविध कुदेव कुलिंगी लोग । उत्तमधर्म नासके जोग ।३८।
सबर[7] विलाल[8] भील चंडाल । नाहलादि[9] कुलमैं विकराल
कल्की उपकल्की कलिमांहि । बयालीस ह्वै मिथ्या नाहिं।३९
अनावृष्टि अतिवृष्टि विख्यात । भूमिवृद्धि वज्रागनिपात ।।
ईतभीत इत्यादिक दोष । कालप्रभाव होंहि दुखपोष ।।४०।।

दोहा ।

यों त्रिलोक प्रज्ञप्तिमैं, कथन कियौ बुधराज ।
सो भविजन अवधारियौ, संसयमेटनकाज ।।४१।।

---

१. दोनों क्षेत्रों में २. दो, तीन, चार इन्द्रिय जीव ३. ब्रह्मणवंश ४. महादेव ५. कलह प्रिय ६. अन्तिम ७-८-९ नीच जाति ।

गीता

तीसरे कालहूं मुकति साधैं, प्रथमतीर्थंकर सही ।
पुनि तीन तीरथ होंहि चक्री, एक हरि[1] जिनवर वही ।।
इस भांति चौथे जुग सलाका पुरुष ऊने अवतरैं ।
हुंडावसर्पिनिमैं अठावन जीव बासठ पद धरैं ।।४२।।

चौपई ।

तब फनेस[2] आसन कंपियौ । जिनउपकार सकल सुधि कियौ ।
ततखिन पदमावति ले साथ । आयौ जहं निवसैं जिननाथ।४३
करि प्रणाम परदछना दई । हाथ जोरि पदमावति नई ।।
फनमंडप कीनौ प्रभुसीस । जलबाधा व्यापै नहिं ईस ।।४४।।
नागराज[3] सुर देख्यौ जाम । भाज्यौ दुष्ट जोतिषी ताम ।।
हीनजोग सूझी यह बात । भागि जाय तबही कुसलात ।४५।
अब सब कोलाहल मिट गये । प्रभु सत्तमथानक[4] थिर भये ।
विकलपरहित चिदातमध्यान । करैं कर्मछयहेत महान ।।४६।।
सात प्रकृति चौथे गुनठान । पहले नास करीं भगवान ।।
अब ह्यां धर्मध्यानबल घोर । तीन प्रकृति जीती बरजोर।४७।
प्रथम सुकल पदसौं परनये । खिपकसेनिमारग पर ठये ।।
प्रकृति छतीस नवें छय करी । दसवैं लोभप्रकृति प्रभु हरी।४८

दोहा ।

एकादसम[5] उलंघिपद, चढ़े बारहैं थान ।।
कर्मप्रकृति सोलह तहां, नास करी अवसान[6] ।।४९।।

---

१. नारायण (किन्तु यहां कामदेव होना चाहिए) २. धरणेन्द्र ३. धरणेन्द्र ४. अप्रमत्त गुणस्थान ५. उपशान्त मोह ६. अंत ।

चौपई।

इहिविध त्रेसठ प्रकृति निवार। घाते कर्म घातिया चार॥
चैतअंधेरी चौदस जान। उपज्यो प्रभु के पंचम[1] ग्यान।५०।
लोकालोक चराचर भाव। बहुविध परजयवंत सुभाव॥
ते सब आन एक ही बार। झलके केवलमुकुर[2] मंझार॥५१।
भये अनंत चतुष्टयवंत। प्रगटी महिमा अतुल अनंत॥
दिव्य परम औदारिक देह। कोटि भानुदुति जीतो जेह।५२।
अलौकिक अद्भुत संपदा। मंडित भये जिनेसुर तदा॥
वचनअगोचर महिमा सार। बरनन करत न पइये पार।५३।

दोहा।

पांच हजार प्रमान धनु[3], उपजत केवलग्यान॥
अंतरिच्छ[4] प्रभु तन भयौ, ज्यों ससि अंबरथान *॥५४॥

चौपई।

प्रकटी केवल रविकिरन जाम। परिफूल्यौ त्रिभुवन कमल ताम
आकास अमल दीसै अनूप। दिसि-विदिसि भई सब विमलरूप
सुरलोक बजैं घंटागरिष्ट। तरु करन लगे तहां पुहपविष्ट॥
इंद्रासन कांपे अतिगरीस। आनम्र[5] भये मनिमुकुट सीस॥५६
इत्यादिक बहुविध चिह्न चार। प्रभु केवलसूचक भये सार॥

* उक्तं च गाथा—
जादे केवलणाणे परमोदारं जिणाण सव्वाणं।
गच्छदि उवरि चावा पंचसहस्साणि वसुहाओ।

१. केवलज्ञान २. काच ३. धनुष ४. आकाश ५. झुके।

तब अवधि जोड़ि जान्यौ सुरेस । छय करे कर्म पारसजिनेस५७
सिंहासन तजि निज सीसनाय । प्रनमो परोख सुख उर न माय
इंद्रानी पूछै कहहु कंत[1] । क्यों आसन तजि उतरे तुरंत ।५८।
किस कारन स्वामो नयौ सीस । याको प्रतिउत्तर देहु ईस ॥
तब बोले विकसित देवराज । प्रभु उपज्यौ केवलग्यान आज ॥
ऐरावतगज सजि सपरिवार । प्रथमेंद्र चल्यौ आनंद अपार ॥
बाजे बहु पटह[2] पयान[3]-भेर । सब बरनन करत लगै अबेर।६०
ईसानप्रमुख सब स्वर्गनाथ । निजबाहन चढ़ि चढ़ि चले साथ ॥
हरिनाद[4] सुन्यौ जोतिषी देव । चंद्रादि चले तब पंच भेव[5]।।६१
भावन-घर बाजे संख भूरि । दसबिध सुर निकसे हरष पूरि[6]।।
वसु[7] वितर-घर गरजे निसान। यौं परिजन सब कीनौं पयान।६२
यों चली चतुरबिध सुरसमाज । जिन-केवलपूजा करन काज ।।
अंबर तजि आये अवनिमांहि । जहँ समोसरन धुज फरहरांहि
जो सुरपतिकौ उपदेश पाय। धनपतिने[8] कीनौं प्रथम आय ।।
वर पंचबरन मनिमय अनूप । जगलछमीकौ कुलगृह सरूप ।।६४

दोहा ।

समोसरनकी संपदा, लोकोत्तर तिहुं भौन ।
वचनद्वार बरनै तिसै, सो बुध समरथ कौन ।।६५।।

सोरठा ।

पै थल अवसर पाय, धर्मध्यानकारन निरखि ।।
लिख्यौ लेस मन लाय, पढ़त सुनत आनंद बढ़ै ।।६६।।

१. स्वामी २. नक्कारा ३. गमन का बाजा ४. सिंह की ध्वनि ५. भेद ६. पूर्ण ७. आठ ८. कुबेर ।

चौपई ।

पहले गोलपीठिका[1] ठई । इद्रनीलमनिमय निर्मई ।।
पांच कोस चौड़ी परवान । तीनलोक उपमा नहि आन ।।
जाके चहुंदिस गिरदाकार[2] । बनी पैंड़िका[3] बीसहजार ।।
हाथ हाथपर ऊंचो लसैं । नभपरजंत देखि दुख नसैं ।।६७।।
तापर धूलीसाल उतंग । पंचरतनरजमय सरवंग ।।
विविध बरनसौं बलयाकार[4] । झलकै इन्द्रधनुष उनहार ।।६८
कहीं स्याम कहि कंचनरूप । कहि विद्रुम कहि हरित अनूप ।।
समोसरन लछमीको एम । दिपै जड़ाऊ कुंडल जेम ।।६९।।
चारौं दिसि तोरन बन रहे । कनक थंभ ऊपर लहलहे ।।
आगे मानभूमि है जहां । मानथंभ[5] चारोंदिसि तहां ।।७०।।
तिनकी प्रथम पीठिका बनी । सोलह पैंड़ी संजुत ठनी ।।
चार चार दरवाजे ठान । तीन तीन तहां कोट महान ।७१
तिनमैं और त्रिमेखलपीठ[6] । तिनपै मानथंभ थिर दीठ ।।
अति उतंग कंचनके ठये । छत्रधुजादिकसौं छबि छये ।।७२।।
जिनैं देखि मानी मद-बढ़े । उतरे मान-महागिरि-चढ़े ।।
मूलभाग प्रतिमा मनहरैं । इंद्रादिक पूजा विसतरैं ।।७३।।
एक एक दिसि चहुं दिसि ठई । सहज वापिका[7] बारिज-छई
नंदादिक सुभ जिनके नाम । चारौं दिसि सोलह सुखधाम ।।
आगे खाई सोभित खरी । औंड़ी अधिक विमलजलभरी ।।
रतन-तीर राजैं चहुँओर । हंसकलाप[8] करैं जहं सोर ।।७५

१. चबूतरा २ गोलाकार ३. सीढ़ियां ४ गोल ५. मानस्तम्भ ६. तीन मेखला वाला चबूतरा ७. बावड़ी ८. हंसों का समूह ।

दोहा ।

बलयाकृति[1] खाई बनी, निर्मल जल लहरेय ।
किधौं विमल गंगानदी, प्रभु परदछना देय ।।७६।।

चौपई

आगे पुहपबेल[2]-बन सार । महासुगंध[3] मधुपसुखकार ।।
सघन छांह सब रितुके फूल । फूले जहां सकल सुखमूल ।७७।
याकै कछु अंतर दुति धरै । कंचन कोट प्रथम मनहरै ।।
बलयाकृति अति उन्नत जेह । मानौं मानुषोत्र गिरि येह ।७८।
चहुँदिसि सोहैं चार दुवार । रूपमई तिखने मनहार ।।
रतनकूट ऊपर जगमगैं । लाल बरन अतिसुन्दर लगैं ।।७९।।
किधौं अरुन-छबि हाथ उठाय । जगलछमी नाचै बिहसाय ।
नौनिधि जहां रहैं अभिराम । पिंगलादि हैं जिनके नाम ।८०।
प्रभुअजोग[4] गिन दीनी छार[5] । वे मचलीं[6] सेवैं दरबार ।।
मंगल दरब एकसौ आठ । धरे प्रतेक मनोहर ठाठ ।।८१।।
गावैं जिनगुन देवकुमार । और बिबिध सोभा तहं सार ।।
विंतरदेव खड़े दरवान । बिनयहीनकौ देंहि न जान ।।८२।।
यह पहले गढ़की बिधि कही । आगे और सुनौ अब सही ।।
गोपुर[7] तजि चारौं दिसि गली । गमनहेत भीतरकौं चली ।८३।
तहां निरतसाला दुहुँ पास । सब दिसिमैं जानौ सुखवास ।।
सुवरनथंभ फटिकमय भीत । तिखनी[8] मनिमय सिखर पुनीत

१. गोल २. पुष्प बेल ३. भौंरे ४. अयोग्य ५. राख ६. गिरीपड़ी
७. दरवाजे ८. तीन खन का ।

सुरवनिता नाचै तहँ एम । लावन-तोय-तरंगनि[1] जेम ॥
मंदहास मुख सोहैं खरीं । जिनमंगल गावैं सुखभरीं ॥८५॥
बाजैं बीन बांसली ताल । महा मुरजधुनि होय रसाल ॥
आगे बीथी अंतर धरे । दोनों दिसा धूपघट भरे ॥८६॥

सोरठा ।

स्याम वरन यह जानि, धूप धुम्रां नभकौं चल्यौ ।
किधौं पुन्य-डर मानि, धूम्रां मिस पातक[2] भज्यौ ॥८७॥

चौपई ।

आगे चार बाग चहुँ ओर । प्रथम असोक नाम चितचोर ॥
सप्तपरन चंपक सहकार । ये इनकी संग्या[3] अविधार ॥८८॥
सब रितुके फल-फूलन-भरे । बिरछ बेलसौं सोहत खरे ॥
वापीमंडप महल मनोग । राजैं जहां जथाबिध जोग ॥८९॥
चैत-बिरछ च्यारों बनमांहि । मध्यभागसुन्दर छबि छांहि ॥
जिनमुद्रामंडित मन हरैं । सुर नर नित पूजा बिस्तरैं ॥९०॥
बाग ओट बेदी चहुँओर । चार द्वारमंडित छबि-जोर ॥
अब इस बन-बेदीतैं सही । गढ़परजंत गली जे रही ॥९१॥
तिनमैं धुजापांति फहरांहि । कंचनथंभ लगी लहरांहि ॥
दसप्रकार आकार समेत । तिनके भेद सुनौ सुखहेत ॥९२॥
माला वसन[4] मोर अरविंद[5] । हंस गरुड़ हरि वृषभ गयंद[6]
चक्रसहित दस चिहन मनोग । धुजा दुकूलनि[7] सोहैं जोग ॥

१. जहरें २. पाप ३. नाम ४. वस्त्र ५. कमल ६. हाथी ७. कपड़ा ।

ये दस एक जातको जान । एक एकसौ आठ प्रमान ।
दससै असी सबै मिल भई । एक दिसामैं सब बरनई ।।९४।।
चारौं दिसिकी जोड़ सरीस । चार हजार तीनसै बीस ।।
यह परमित जिनसासनमांहि । अतिविचित्र सोभा अधिकांहि।।
हालैं धुजा पवन-वस येह । जिनपूजन भवि आये जेह ।।
पंथखेद तिनको मन आन । करत किधौं सतकार-विधान।।९६
मानथंभ धुजथंभ अनूप । चैतबिरछ बेदी गढरूप ।।
इत्यादिक ऊंचे इकसार । जिन-तनतै बारह गुन धार ।।९७।
आगे रजतमयी निरमान[1] । तुंग[2] कोट अति धवल महान ।
किधौं सेत प्रभु-सुजस-प्रकास । फेरी देय फिर्यौ चहुंपास ।।९८
पूरबवत दरवाजे चार । रतनमई अनुपमछबि-धार ।।
नौनिधि मंगलदरब समाज । तोरनप्रमुख और सब साज ।।९९
प्रथमकोटबरननसम जान । ठाड़े भवन देव दरवान ।।
यासौं लगी और अब गली । चारौं तरफ एक सी चली ।।१००
कलपबिरछ-बन राजै तहां । दस बिध कलपतरोवर जहां ।।
भूषन वसन लगे जिन डार । सोभा कहत न लहिये पार ।।
मध्यभाग जिनबिंबसमेत । सिद्धारथ[3] तरुवर छबि देत ।।
चहुँदिसि बेदी चहुँ दिसि द्वार । रचना और अनेक प्रकार ।।
इस बेदीके बाहर भाग । आगे फटिक कोट लौं लाग ।।
अति विचित्र महलनकी पांति । जिन सिर रतनकूट बहुभांति

१. बनाई २. ऊंची ३ एक वृक्ष विशेष ।

चंद्रकांतिमनि-भासुर[1] भीत । सुवरनमय तहां थंभ पुनीत ।।
सुरनरनाग रमैं जिनमांहि । किन्नरगन बहु केलि कराहिं।।१०
बीथी[2]मध्यदेस सुभरूप । पद्मराग-मनिमय नव तूप ।।
धुजा छत्र घंटा छबि देहिं । जिनमुद्रासौं मन हर लेहिं ।।१०५
आगं तृतिय कोट बन एम । फटिकमई निर्मल नभ जेम ।।
अति उतंग सो बलयाकार । लालबरन मनिनिर्मित द्वार ।।
और कथन पूरबवत जान । ठाड़े सुरगदेव दरवान ।।
महामनोहर लोचनहारि । अनुपमसोभा अचरजकारि ।१०७।
अब सुनि मध्य भूमिकी कथा । फटिककोटभीतर विधि जथा।।
गढ़सौं प्रथमपीठ लग लगी । फटिकभीत सोलह जगमगी ।१०८
तिनपै रतनथंभ छबि देहिं । प्रभा-[3]जालसौं तम हर लेहिं ।।
तिनहीपै श्रीमंडप छयो । फटिकमई नभमैं निरमयो ।।१०९।

सोरठा ।

या श्रीमंडपमांहि, निराबाध[4] तिहुं जग बसै ।
भीर[5] होय तहां नांहि, त्रिभुवनपति अतिसय अतुल ।।११०।

चौपई ।

भीतन बीच गली जे रहीं । बारहसभा तहां जिन कहीं ।।
बैठे मुनि अपछर अज्जिया[6] । जोतिष-वान-असुर-सुर-तिया ।
भावन वितर जोतिषि देव । कल्पनिवासी नर-पसु एव ।।
तिनमैं प्रथम पीठिका ठई । अनुपम बैडूरज-मनिमई ।।११२।

१. चमकदार २. गली ३. चमक ४. बाधारहित ५. भीड़ ६. आर्यिका ।

मोरकंठवत आभा जास । सोलह पैंड साल चहुँ पास ।।
बारह सभा महा दिसि चार । तिनकौं यह पथ सोलह सार ।
मंगलदरब जहां सब धरे । जच्छदेव सेवक तहां खरे ।।
धर्मचक्र तिनके सिर दिपं । जिनकौं देखि दिवाकर[1] छिपं ११४
तापर दुतिय पीठिका बनी । चामीकर[2]मय राजत घनी ।।
मेरुशृङ्गवत[3] उन्नत एम । जगमगाय मंडल रवि जेम ।११५।
आठधुजा आठौं दिसि जहां । तिन सोभा बरनन बुधि कहां ।
तिनमैं आठ चिह्न चित्राम । चक्र गयंद वृषभ अभिराम ११६
वारिज वसन केहरीरूप । गरुड़ माल आकार अनूप ।।
मंदपवनवस हालैं जेह । किधौं पापरज झारत येह ।।११७।।
तापर तृतिय पीठिका और । तीन मेखला-मंडित ठौर ।।
सर्वरतनमय झलकत खरी । किरन जास दस दिसि विस्तरी।।
गंधकुटी तहां बनी अनूप । पंचरतनमय जड़ित सरूप ।।
जाके चार द्वार चहुँओर । झलकैं मानिक हीरा-हीर ।११९।
तीनपीठ सिर सोहत खरी । किधौं[3] त्रिजगछबि नीची करी
परम सुगंध न बरनी जाय । सुन्दर सिखर धुजा फहराय ।।
तहां हेम-सिंहासन सार । तेजसरूप तिमिर छयकार ।।
नानारतन प्रभामय लसैं । जगलछमी प्रति किरनन हसैं ।।
वचनगम्य नहिं सोभा जहां । अंतरीच्छ[4] प्रभु राजैं तहां ।।
त्रिभुवनपूजित पासजिनेस । ज्यों जगसिखर सिद्धपरमेस ।।

१. सूर्य २. सोना ३. चोटी ४. मानो ५. आकाश में ।

दोहा।

समवसरन रचना अतुल, ताको अति विस्तार।
संपति श्रीभगवानकी, कहत लहत को पार ॥१२३॥

सोरठा।

जिन-बरनन-नभमांहि, मुनि विहंग उद्यम करें।
पै उड़ि पार न जांहि, कौन कथा नर दीनकी ॥१२४॥

गीता

राजत उपंग असोक तरुवर, पवनप्रेरित थरहरैं॥
प्रभु निकट पाय प्रमोद नाटक, करत मानौं मनहरैं॥
तिस फूलगुच्छन भ्रमर गुंजत, यही तान सुहावनी।
सो जयौ पासजिनेन्द्र, पातकहरन जगचूडामनी[१] ॥१२५॥
निज मरन देखि अनंग डरप्यौ, सरन ढूंढत जग फिरचौ।
कोऊ न राखै चोर प्रभुकौ, आय पुनि पायन गिरचौ॥
यों हार निज हथियार डारे, पुहुप-बरसा मिस भनो।
सो जयौ पासजिनेन्द्र, पातकहरन जगचूडामनी ॥१२६॥
प्रभु अंग नील उतंग नगतैं[२], वानि[३] सुचि सीता ढली[४]।
सो भेदि भ्रम गजदंत पर्वत, ग्यानसागरमैं रली॥
नय सप्तभंगतरंगमंडित, पापतापविधंसनी।
सो जयौ पासजिनेंद्र, पातकहरन जगचूड़ामनो ॥११७॥
चंद्राचिचय[५] छबि चारु चंचल, चमरवृंद सुहावने।
ढोलैं निरंतर जच्छनायक, कहत क्यों उपमा बनै॥

१. सिखामणी २. पहाड़ ३. वाणी ४. बयी ५. चन्द्रिका।

यह नीलगिरिके सिखर मानौ, मेघझर लागी घनी ।
सो जयौ पासजिनेंद्र, पातकहरन जगचूड़ामनी ।।१२८।।
हीराजवाहरखचित[1] बहुविध, हेमग्रासन राजए ।
तहं जगतजनमनहरन प्रभुतन, नीलबरन विराजए ।।
यह जटित वारिज[2] मध्य मानौ, नीलमनिकलिका[3] बनी ।
सो जयौ पासजिनेंद्र, पातकहरन जगचूड़ामनी ।।१२९।।
जगजीत मोह महान जोधा, जगतमैं पटहा दियौ ।
सो सुकलध्यान कृपानबल, जिन बिकट बैरी बस कियौ ।।
ये बजत विजय निसान दुंदुभि, जीत सूचें प्रभुतनी ।
सो जयौ पासजिनेंद्र, पातकहरन जगचूड़ामनी ।।१३०।।
छदमस्त पदमैं प्रथम दरसन, ग्यान चारित ग्रादरे ।
ग्रब तीन तेई छत्र छलसौं, करत छाया छबि-भरे ।।
ग्रति धवलरूप ग्रनूप उन्नत, सोमबिंबप्रभा[4] हनी ।
सो जयौ पासजिनेंद्र, पातकहरन जगचूड़ामनी ।।१३१।।
दुति देखि जाकी चांद सरमैं[5], तेजसौं रवि लाजए[6] ।
ग्रब प्रभामंडलजोग जगमैं, कौन उपमा छाजए ।।
इत्यादि ग्रतुल विभूतिमंडित, सोहिए त्रिभुवनधनो ।
सो जयौ पासजिनेंद्र, पातकहरन जगचूड़ामनी ।।१३२।।
यों ग्रसम[7] महिमासिंधु साहब, सक्र[8] पार न पावही ।
तजि हासभय तुम दास 'भूधर', भगतिवस जस गावही ।।

१. जड़ित २. कमल ३. कली ४. चन्द्रबिंब ५-६. लज्जितहो ७. उपमारहित ८ इन्द्र ।

अब होउ भव भव स्वामि मेरे, मैं सदा सेवक रहौं।
कर जोर यह बरदान मांगौं मोखपद जावत[1] लहौं।१३३।

चौपई।

इह बिध समोसरनमंडान। कियो कुबेर जथाविध थान ।।
आये सुर बरसावत फूल। जयजयकार करत सुखमूल।१३४।
अति प्रसन्नता सब बिध भई। हरसत तीन प्रदछिना दई ।।
धूलसालिमें कियौ प्रवेश। चकितभयौ छबि देखि सुरेस।१३५।
मुदित महर्धिक[2] देवन साथ। जिनसनमुख आयौ सुरनाथ।
हस्तकमल जोरे अमरेस[3]। देखे दृग भरि पासजिनेस।१३६।
मनि उतंग आसन पर ईस। मानौं मेघ[4] रतनगिरि-सीस ।।
फैल रही तनकिरनकलाप[5]। कोटभानुसौं[6] अधिक प्रताप।१३७।
विकसत चित रोमांचित काय। प्रनम्यौ चरन सीस भुविलाय।।
मनिझारी भरि तीरथतोय। पूजे मघवा[7] जिनपद दोय।१३८।
सुरग-सुगन्धनि भक्ति बढ़ाय। अरचे[8] इन्द्र जिनेसुरपाय ।।
मुक्ताफलमय[9] अच्छत[10] लिये। पुंज[11] परमगुरु आगे दिये१३९
पारिजात मंदार मनोग। पुहप चढ़ाये जिनवर जोग ।।
सुधापिंड चरु लेय पवित्त। पूजा करी सक्र धरि चित्त।१४०।
रतनप्रदीप रवाने खरे। श्रीपति पांय सचोपति धरे ।।
देवलोकको अगर अनूप। पासचरन खेई सुरभूप ।।१४१।।

१. जबतक २. महा ऋद्धिधारी ३. इन्द्र ४. बादल ५. समूह ६. करोडों सूर्यो से ७. इन्द्र ८. पूजे ९. मोती समान १०. चावल ११. समूह।

कलपतरोवरके फल रजे । जगपतिपाय पुरन्दर जजे ।।
सखदरब धरिकरि परनाम । दीन्यौ इन्द्रअरघ अभिराम ।१४२।

दोहा ।

करि जिनपूजा आठ बिध, भावभगति बहुभाय ।
अब सुरेस परमेसथुति, करत सीस निज नाय ।।१४३।।

चौपई ।

प्रभु इस जग समरथ नहिं कोय । जापै जसबरनन तुम होय ।
चारग्यानधारी[1] मुनि थके । हमसे मन्द कहा करसके ।१४४।
यह उर जानत निहचै कीन । जिनमहिमाबरनन हम हीन ।।
पै तुमभगति करै बाचाल[2] । तिसवस होय गहूं गुनमाल।१४५।
जय तीर्थङ्कर त्रिभुवनधनी । जगचन्द्रोपम चूड़ामनी ।।
जय जय परनधरमदातार । करमकुलाचल[3] चूरनहार ।१४६।
जय सिवकामिनिकंत महंत । अतुल अनंत चतुष्टयवंत ।।
जय जग आसभरन बड़भाग । सिवलछमीके सुभग सुहाग१४७
जय जय धर्मधुजाधर धीर । सुरगमुकतिदाता वर बीर ।।
जय रतनत्रय रतनकरंड[4] । जय जिन तारनतरन तरंड[5]।१४८।
जय जय समोसरन-सिंगार । जय संसयवनदहन तुसार[6] ।।
जय जय निर्विकार निर्दोष । जय अनंतगुनमानिककोष ।१४९
जय जय ब्रह्मचरजदल साज । कामसुभटविजयी भटराज ।
जय जय मोह-महानग-करी[7]। जय जयमदकुंजर[8] केहरि[9]।१५०।

१. गणधर २. बोलने योग्य ३. पर्वत ४. पिटारे ५. नाव ६. बर्फ ७. हाथी ८. हाथी ९ सिंह ।

क्रोधमहानलमेघ प्रचंड । मानमहीधरदामिनिदंड ।।
मायाबेलधनंजयदाह[1] । लोभसलिलसोखक दिननाह[2] ।।१५१।।
तुम गुनसागर अगम अपार । ग्यानजिहाज न पहुँचे पार ।।
तट ही तट पर डोलत सोय । स्वारथ सिद्ध तहांहो होय।१५२।
प्रभु तुम कीर्तिबेल बहु बढ़ी । जतनबिना जगमंडप चढ़ी ।।
और अदेव सुजस नित चहैं । ये अपने घरही जस लहैं ।१५३।
जगतजीव घूमैं बिनग्यान । कीनें मोहमहाविषपान ।।
तुमसेवा विषनासन जरी । यह मुनिजन मिलि निहचै करी ।
जन्मलता मिथ्यामतमूल । जामनमरन लगें जिहि फूल ।।
सो कबही बिन भगतिकुठार । कटै नहीं दुखफलदातार।१५५।
कलपतरोवर चित्राबेल[3] । काम-पोरसा[4] नौनिधि मेल ।।
चिंतामनि पारस पाषान । पुन्यपदारथ और महान ।।१५६।।
ये सब एकजनमसंजोग । किंचित सुखदातारनियोग ।।
त्रिभुवननाथ तुमारी सेव । जनमजनम सुखदायक देव ।१५७।
तुम जगबांधव तुम जगतात । असरनसरन-बिरद-विख्यात ।।
तुम जगजीवनके रछपाल । तुम दाता तुम परमदयाल।१५८।
तुम पुनीत तुम पुरुष-पुरान[5] । तुम समदरसी तुम सबजान ।
तुम जिन जग्यपुरुष परमेस । तुम ब्रह्मा तुम विष्णु महेस।१५९।
तुमही जगभरता जगजान । स्वामि स्वयंभू तुम अमलान ।
तुम बिन तीनकाल तिहुंलोय । नहिं नहिं सरन जीवकों कोय।।

१. अग्नि २. सूर्य ३. अद्भुत बेल ४. इच्छापूर्ण करने वाली ५. पौराणिक पुरुष

तिस कारन करुनानिधि नाथ । प्रभु सनमुख जोरे हम हाथ ।
जबलौं निकट होय निरवान । जगनिवास छूटै दुखदान ।१६१।
तब लौं तुम चरनांबुज-बास । हम उर होहु यही अरदास[1] ।
और न कछु बांछा भगवान । यह दयाल दीजै वरदान ।१६२

दोहा ।

इहिविध इन्द्रादिक अमर, करि बहु भगति विधान ।
निज कोठे बैठे सकल, प्रभु सम्मुख सुखमान ॥१६३॥
जीति कर्मरिपु जे भये, केवललब्धि–निवास ।
ते श्रीपारसप्रभु सदा, करो विघन-घन[2] नास ॥१६४॥

इति श्रीपार्श्वपुराणभाषायां भगवत्ज्ञानकल्याणकवर्णनं नाम अष्टमोधिकारः ।

नौवां अधिकार

—•–०–०—

सोरठा ।

पारसप्रभुकौं नाउँ, सार सुधारस जगतमैं ।
मैं याकी बलि जाउँ, अजर-अमर-पदमूल यह ॥१॥

दोहा ।

बारह सभा सुथानमधि, यों प्रभु आनन्दहेत ।
जथा कमलिनी[3] खंडकौं, ससिमंडल सुख देत ॥२॥
विकसितमुख सुरनर सकल, जिनसन्मुख करजोर ।
निवसैं प्यासे अमृतधुनि, ज्यौं चातक घनओर ॥३॥

१. प्रार्थना २. बादल–समूह ३. कुमोदिनी ।

चौपई।

तब-गनराज स्वयंभू नाम। चार ग्यानधारी गुनधाम।।
करि प्रनाम पारसप्रभुओर। विनती करी करांजुलि जोर।।४।।
भो स्वामी त्रिभुवनघर येह। मिथ्यातिमिर छयो अति जेह।
भूले जीव भमैं तामांहि। हितअनहित कछु सूझै नांहि।।५।।
श्रीजिनबानी दीपक-लोय। ता बिन तहां उदोत[1] न होय।
तातैं करुनानिधि स्वयमेव। करि उपदेश अनुग्रह[2] देव।।६।।
जानननजोग कहा है ईस। गहनजोग सो कह जगदीस।।
त्यागनजोग कहो भगवान। तुम सबदरसी पुरुष प्रमान।।७।।
कैसे जीव नरकमैं परैं। क्यों पसुजौनि पाय दुख भरैं।।
काहेसौं उपजैं सुरलोय। कौन कर्मतैं मानुष होय।।८।।
कौन पापफल जनमैं अंध। बहरा कौन क्रियासम्बन्ध।।
किस अघ उदय होय नर पंग। गूंगा किस पातक-परसंग।।९।
कौन पुण्यतैं दरब अतीव। क्यों यह होय दरिद्री जीव।।
पुरुष-वेद[3] किस कर्म उदोत। नारि नपुंसक किस विध होत।
किस आचरन बड़ी थिति धरै। क्यों करि अलप आयु धरि मरै।
भोगहीन अरु भोगसमेत। सुखी दुखी दीखैं किस हेत।।११।।
किस कारन मूरख मतिहीन। क्यों उपजैं पंडित परवीन।।
किस करनीतैं होय सरोग। किस अक्रमतैं पुत्रवियोग।।१२।।
विकल सरीर पाय दुख सहै। नीच ऊंचकुल कैसैं लहै।।
किनभावनि भवथिति विस्तरै। भवथितिभेद कहाकरि करै।।

१. प्रकाश २. दया ३. लिंग।

क्योंकर होय सुरगमैं इन्द्र । कैसैं पद पावै अहमिंद्र ।।
चक्रीपद किस पुन्यउदोत । किमि बांधै तीर्थंकरगोत ।।१४।।
इत्यादिक यह प्रस्न समाज । इनको उत्तर कहु जिनराज ।।
तुम सब संसयहरन जिनेस । जैसे भवतमदलन दिनेस ।।१५।।

दोहा ।

तब श्रीमुखवानी विमल, बिन अच्छर गम्भीर ।।
महामेघकी गरज सम, खिरी हरन जगपीर[1] ।।१६।।
तालु होठ सपरस बिना, मुखविकार बिन सोय ।
सब भाषामय मधुरतर, श्रीजिनकी धुनि होय ।।१७।।
जथा मेघजल परिनमैं, निंबादिक रसरूप[2] ।
तथा सर्वभाषामई, श्रीजिनवचन अनूप ।।१८।।

चौपई ।

छहौं दरब पंचासतिकाय । सात तत्त[3] नौ पद समुदाय ।।
जाननजोग जगतमैं येह । जिनसौं जांहि सकल संदेह ।।१९।।
सब विध उत्तम मोखनिवास । आवागमन मिटै जिहि वास ।।
तातैं जे सिवकारन भाव । तेई गहनजोग मन लाव ।।२०।।
यह जगवास महादुखरूप । तातैं भ्रमत दुखी चिद्रूप ।।
जिनभावन उपजै संसार । ते सब त्यागजोग निरधार ।।२१।।
नरकादिक जग-दुख जावंत । पापकर्मबसतैं बहुभंत ।।
सुरगादिक सुखसंपति जेह । पुन्य तरोवरको फल तेह ।।२२।।

---

१. संसार के दुःख २. नीम आदि ३. तत्त्व ।

दोहा।

इहि विध प्रस्नसमाजकौ, यह उत्तर सामान।
अब विसेस इनकौ लिखौं, जथासकति कछु जान ।।२३।।
जीव अजीव विसेस बिन, मूल दरब ये दोय।
इनहीकौ फैलाव सब, तीनकाल तिहु' लोय ।।२४।।
चेतन जीव अजीव जड़, यह सामान्यसरूप।
अनेकांत जिनमतविषै, कह्यौ जथारथरूप ।।२६।।
दरब अनेक नयातमक[1], एक एक नय साधि।
भयौ विविध मतभेद यौं, जगमै बढ़ी उपाधि ।।२६।।
जन्मअंध गजरूप[2] ज्यौं, नहि जानै सरवंग।
त्यौं जगमैं एकांत मत, गहै एक ही अंग ।।२७।।
ता विरोधके हरनकौं, स्यादवाद जिनबैन।
सब संसयमेटन विमल, सत्यारथ सुखदैन ।।२८।।
सात भंगसौं साधिये, दरवजात जामांहि।
सधै वस्तु निरविघन तब, सब दूषन मिट जांहि ।।२९।।

घनाक्षरी।

अपने-चतुष्टैको[3] अपेच्छा दर्ब 'अस्ति' रूप,
परकी अपेच्छा वही 'नासति' बखानियै।
एकही समै सो 'अस्ति नासति' सुभाव धरै,
ज्यौं है त्यौं न कहा जाय 'अवक्तव्य' मानियै।।
अस्ति कहै नासति अभाव 'अस्ति अवक्तव्य',

1. नयात्मक 2. हाथी का स्वरूप 3. स्व चतुष्टय (द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव)

त्यों ही नास्ति कहैं 'नास्ति अवक्तव्य' जानिये ।।
एकै बार अस्ति नास्ति कह्यौ जाय कैसें तातें,
'अस्तिनास्तिअवक्तव्य' ऐसें परवानियें ।। ३० ।।

दोहा ।

इहि विध ये एकांतसौं, सात भंग भ्रमखेत ।
स्यादवाद पौरुष धरें, सब भ्रमनासन हेत ।।३१।।
स्यादसब्दको अर्थ जिन, कह्यौ कंथचित जान ।
नागरूप[1] नयविषहरन, यह जग मंत्र महान ।।३२।।
ज्यों रससिद्ध कुधातु[2] जग, कंचन होय अनूप ।
स्यादवाद-संजोगतें, सब नय सत्यसरूप ।।३३।।

चौपई ।

दरवदिष्टि जिय नित्तसरूप । परजयन्याय अथिर चिद्रूप ।।
नित्यानित्य कथंचित होय । कह्यौ न जाय कथचित सोय ।।
नित्य अवाचि[3] कथंचित वही । अथिर अवाचि कथंचित सही।।
नित्यानित्यअवाचक जान । कहत कथंचित सब परवान ।३५।
इहिबिध स्यादवाद नयछांहि । साध्यौ जीव जैनमतमांहि ।।
और भांति विकलप जे करें । तिनके मत दूषन विसतरें।३६।
जीव नाम उपयोगी जान । करता भुगता देहप्रमान[4] ।।
जगतरूप सिवरूप अरूप । ऊरधगमन सुभावसरूप ।।३७।।

---

१. सर्प २ लोहा ३. अवक्तव्य ४. देह बराबर ।

सोरठा ।

ये सब नौ अधिकार, जीवसिद्धिकारन कहे ।
इनकौ कछु विस्तार, लिखौं जिनागम देखिकै ।।३८।।

चौपई ।

चार भेद व्यौहारी प्रान । निहचै एक चेतना जान ।।
जो इनसौं नित जीवित रहै । सोई जीव जैनमत कहै ।३९।

सोरठा ।

प्रथम आव अवधार[1], इन्द्री सांस उसांस बल ।
मूल प्रान ये चार, इनके उत्तरभेद दस ।।४०।।

दोहा ।

पांच प्रान इन्द्रीजनित, तीनभेद बलप्रान ।
एक सांस उस्वास गनि, आवसहित दस जान ।।४१।।

चौपई ।

सैनी जीव जगतमैं जेह । दसौं प्रानसौं जीवै तेह ।।
मनसौं रहित असैनी जात । ते नौप्रान धरैं दिनरात ।४२।।
कान बिना चौइन्द्री जिते । आठ प्रानके धारक तिते ।।
तेइन्द्रीके आंख न भनो । तातै सात प्रानके धनी ।।४३।।
नासा[2] बिन बेइन्द्री[3] जीव । तिन सबके षट प्रान सदीव ।।
जीभ-वचनवर्जित तन तास । एकेंद्री चउ प्राननिवास ।।४४

दोहा ।

इहिबिध जीव अजीव सब, तीनकाल जगथान ।
सत्तासुख अवबोध चित, मुकतजीव के प्रान ।।४५।।

---

१. अवधारण करना २. नाक ३. दो इन्

चौपई।

दोप्रकार उपयोग बखान। दरसन चार आठ विध ग्यान ।।
चच्छु अचच्छु अवधि अवधार। केवल ये सब दरसन चार ।४६।
अब सुन वसु[1]विधग्यान-विधान। मति-स्रुतअवधिग्यानअज्ञान
मनपर्जय केवल निरदोख। इनके भेद प्रतच्छ परोख ।।४७।।
मतिश्रुतिग्यान आदिके दोय। ये परोख जानैं सब कोय।।
अवधि और मनपरजयग्यान। एकदेस[2]परतच्छ प्रमान ।४८।
केवलग्यान सकल परतच्छ। लोकालोक-विलोकन दच्छ[3] ।।
जहां अनंत दरबपरजाय। एक बार सब झलकैं आय ।४६।
दरसन चार आठ बिध ग्यान। ये व्यवहार चिहन जो जान
निहचैरूप चिदातम येह। सुद्ध ग्यान दरसन गुनगेह ।।५०।।
कल्पित असदभूत व्यवहार। तिस नय घटपटादि कर्तार ।।
अनुपचरित अजथारथरूप। कर्मपिंडकरता चिद्रूप ।।५१।।
जब असुद्धनिहचैबल धरै। तब यह रागदोषकौं हरै ।।
यही सुद्ध निहचै कर जीव। सुद्ध भावकरतार सदीव ।।५२।।

सोरठा।

प्रानी सुख दुख आप, भुगतै पुद्गलकर्मफल।
यह व्यवहारी छाप, निहचै निजसुखभोगता ।।५३।।

दोहा।

देहमात्र व्यवहार कर, कह्यौ ब्रह्म भगवा

अडिल्ल छंद ।

लघुगुरु देहप्रमान, जीव यह जानिये ।
सो विथार[1]-संकोच[2]-सकतिसौं मानिये ।।
ज्यों भाजन[3]परवान, दीपदुति विस्तरै ।
समुदघात विन राम[4], यही उपमा धरै ।।५५।।

चौपई ।

तैजस कारमानजुत भेस । बाहर निकसै जीवप्रदेस ।।
छांड़ै नहीं मूल तन ठाम । समुदघातविधि याको नाम ।।५६
सातभेद सब ताके कहे । गोमटसार देखि सरदहे ।।
प्रथम वेदना नाम बखान । दुतिय कषाय नाम उर आन।।५
तन-विकुर्वना[4] तीजो येह । चौथो मारनांत[5] सुनि लेह ।।
पंचम तैजस संग्या जान । छट्टम आहारक अभिधान[6] ।।५८
केवल समुदघात सातमा । ऐसी सकति धरै आतमा ।।५६।
दुसह वेदनाके वस जहां । जीवप्रदेस कढ़त हैं तहां ।।
किसी जीवकै हो परवान । पहला समुदघात यह जान ।।६०
जब नाहू रिपु करन विधंस । बाहर जाहिं जीवके अंस ।।
अतिकषायसों हो है तेह । दूजो समुदघात है येह ।।६१।।
नाना जात विक्रियाहेत । निकसै ब्रह्मप्रदेस सचेत ।।
देवनारकीके यह होय । तीजो समुदघात है सोय ।।६२।।
किसी जीवकै मरने समै । हंस[8] अं...

बांधी गतिके परसन[1] काज । चौथो भेद कह्यौ जिनराज ।६३।
जो मुनिकै कछु कारन पाय । उपजै क्रोध न थांभ्यौ जाय ।।
तैजस तनको औसर यही । वाम[2] कंधसौं प्रगटै सही ।।६४।।
ज्वालामई काहलाकार[3] । अर सिंदूरपुंज उनहार ।।
बारह जोजन दीरघ सोय । नौ जोजन विस्तीरन होय ।।६५।।
दंडकपुर वत प्रलय करेय । साधुसमेत भस्म कर देय ।।
असुभकषाय यही विख्यात । अब सुनि सुभ तैजसकी बात ।।
दुर्भिच्छादिक दुख अविलोय[4] । दयाभाव मुनिवरकै होय ।।
सुभआकृतिसौं निकसै ताम । दच्छिन कांधेसौं अभिराम ।६७।
पूरबकथित देह-विस्तार । रोगसोग सब दोष निवार ।।
फिर निज थान करै पैसार । पंचम समुदघात यह धार ।६८।
करत साधु पदअर्थ-विचार । मन संसय उपजै तिहिं बार ।।
तहां तपोधन[5] चिंता करै । कैसे यह विकलप निरवरै ।।६९।।
भरतखेत आदिक भूमाहिं । अब ह्यां निकट केवली नाहिं ।।
तातैं करिये कौन उपाय । बिनभगवान भरम नहिं जाय।७०।
तब मुनि-मस्तकसौं गुनगेह । प्रगट होय आहारक देह ।।
एक हाथ तिस परमित कही । श्रीजिनसासनसौं सरदही ।७१।
फटिक वरन मनहरन अनूप । तहां जाय जहं केवलभूप ।।
दरसनकरि संदेह मिटाय । फेरि आनि नि

दंड-कपाटादिक-विधि ठान । क्रमसौं होंहि लोकपरवान ।।
सप्तम समुदघात यह भाय । सरधा करो भविक मनलाय।७४
मरनांतक आहारक जेह । एक दिसागत जानो येह ।।
बाकी पांच रहे जे आन । ते सब दसौं दिसागत जान ।।७५।
दुबिध रास संसारी जीव । थावर जंगमरूप सदीव ।।
तहां पांच बिध थावरकाय । भू जल तेज वनस्पति वाय।७६।
चार जातके जंगम जंत । चलत फिरत दीखें बहुभंत ।।
संख सीप कौड़ी कृमि[१] जोक । इत्यादिक बेइन्द्री-थोक।।७७।
चैंटी दीम कुंथ पुनिआदि । ये तेइन्द्री जीव अनादि ।।
माखी माछर भृंगीदेह[२] । भ्रमरप्रमुख चौइन्द्री येह ।।७८।।
देव नारकी नर बिख्यात । केतक पसू पचेंद्री जात ।।
ये सब त्रस थावरके भेव । इनकौ बिषयछेत्र सुन लेव ।।७९।।

छप्पय ।

फरस चारसै पांच, जीभ चौसठ सौ नासा[३] ।
दृग जोजन उनतीस, सतक चौवन क्रम भासा ।।
दुगुन असैनी अंत, श्रवन वसु सहस धनुष सुनि ।
सैनी सपरस विषैं, कह्यौ नौ जोजन श्रीमुनि ।।
नौ रसन[४] घ्राण[५] नो चच्छुप्रति, सैंतालीस हजार गिन
दोसै त्रेसठि बारह स्रवनविषै-छेत्रपरवान भन ।।८९।।

दोहा

अथिर अर्थपरयाय[1] जो, हानिवृद्धमय रूप ।
तिसमैं सिद्ध बखानिये, उतपति नाससरूप ॥८७॥
ग्येय[2] त्रिविध परनति धरैं, ग्यान तदाकृत भास ।
यों भी सिवपदमैं सधैं, थित उतपत्ति विनास ॥८८॥
अथवा सब परनति नसे, भई सिद्धपर्याय ।
सुद्धजीव निहचल सदा, यों तीनौं ठहराय ॥८९॥

अडिल्ल ।

बरन पांच रस पांच, गंध दो लीजिए ।
आठ फरस गुन जोर[3], बीस सब कीजिए ॥
जीवविषैं इनमांहि, एक नहिं पाइए ।
यातें मूरतिहीन, चिदातम गाइए ॥९०॥
जगमैं जीव अनादि, बंध-संजोगतें ।
छूट्यौ कबही नांहि, कर्मफलभोगतें ॥
असदभूत व्यवहार, पच्छ जो ठानिए ।
तो यह मूरतिवंत[4], कथंचित मानिए ॥९१॥

दोहा ।

प्रकृतिबंध थितिबंध पुनि, अरु अनुभाग प्रदेस ॥
चारभेद यह बंधके, कहे पास परमेस ॥९२॥
बन्धविवर्जित आतमा, ऊरधगमन करेय ।
एकसमयकरि सरलगति, लोकअंत निवसेय ॥९३॥

१. सूक्ष्म पर्याय २. जानने योग्य

दुनुक[1] आदि परमानूबन्ध । सो सूच्छमसूच्छम सुन बन्ध ।११३।
खट प्रकार पुद्गल इहि भाय । मुख्य गौन सबमैं गुन थाय ।।
इनहीसौं निर्मापत[2] लोक । और न दीखै दूजौ थोक ।११४।
सब्द बन्ध छाया तम जान । सूच्छम थूल भेद संठान ।।
अरु उदोत आतप बहु भाय । यह दसबिध पुद्गलपरजाय ११५
जब जड़जीव चलैं सतभाय[3] । धर्मदरब तब करै सहाय ।।
जथा मीनकौ जल आधार । अपनी इच्छा करत विहार ।११६।
यों ही सहज करै थित सोय । तब अधर्म सहकारी होय ।।
ज्यों मगमैं पंथीकौं छांहि । थितिकारन है बलसौं नांहि ।११७।
जो सब द्रव्यनकौं अवकास । देय सदा सो द्रव्य अकास ।।
ताके भेद दोय जिन कहे । लोक अलोक नाम सरदहे ।११८।
जहं जीवादि पदारथवास । असंख्यातपरदेस निवास ।।
लोकाकास कहावै सोय । परैं अलोक अनंता होय ।।११९।।
लोकप्रदेस असंखे जहां । एक एक कालानू तहां ।।
रतनरासि-वत निवसैं[4] सदा । द्रव्यसरूप सुथिर सर्वदा ।१२०।
बरतावन लच्छन गुन जास । तीनकाल जाकौ नहिं नास ।।
समय घड़ी आदिक बहुभाय । ये व्यवहारकालपरजाय ।१२१।
पहले कह्यौ जीवअधिकार । और अजीव पंचपरकार ।।
ये ही कहौ

३. उपासकाध्ययन य
र श्रावकाचार
उपासकोंके श्रावक जनोंके आचार-धर्मके प्रतिपादन करनेवा
सूत्र, शास्त्र या ग्रन्थका उपासकाध्ययन-सूत्र, उपासकाचार य
श्रावकाचार नामोंसे व्यवहार किया जाता है। द्वादशांग श्रुत
बारह अंगोंमें श्रावकोंके आचार-विचारका स्वतन्त्रतासे वर्णन

तातैं पञ्चअथिकाय[१] हैं, काय काल बिन मान ।।१२३।।

सवैय्या छन्द ।

जीवरुधर्म अधर्म दरब ये, तीनौं कहे लोक-परवान ।
असंख्यात परदेसी राजैं, नभ अनंतपरदेसी जान ।।
संख असंख अनंतप्रदेसी, त्रिबिधरूप पुद्गल पहिचान ।।
एकप्रदेस धरैं कालानू, तातैं काल कायबिन मान ।।१२४।।

दोहा ।

काल काय बिन तुम कह्यौ, एकप्रदेसी जोय ।
पुद्गल परमानू तथा, सो सकाय[१] क्यों होय ।।१२५।।

सवैया

अलख असंख्य दरब कालानू, भिन्नभिन्न जगमांहि बसांहि ।
आपसमांहि मिलैं नहिं कबहीं, तातैं कायवंत सो नांहि ।।
रूप सचिक्कनतैं परमानू, ततखिन बंधरूप हो जांहि ।
यों पुद्गलकौं कायकलपना, कही जिनेसुरके मतमांहि ।।१२६।।
जितने मान एक अविभागी, परमानू रोकै आकास ।
ताको नाव प्रदेस कहावै, देय सर्व दरवनकौं बास ।।
तहां एक कालानू निवसै, धर्म अधर्म प्रदेस निबास ।
रहैं अनंत प्रदेस जीवके, पुद्गल बन्ध लहैं अवकास ।।१२७।।

पोमावती

धर्म अधर्म कालअरु चेतन, चारों दरब अरूपी गाये ।
तातैं एक अकास-देसमैं, प्रभु सबके [illegible]

अथात् इस पाचवें आश्वास तक तो मैंने महाराज यशो
धरका चरित कह

मूरतवंत अनंते पुद्गल, ते उस नभमैं क्योंकर माये ।
यह संसय समझाय कहो गुरु, दास होय हम पूछन आये ।१२८।

सोरठा

बहु प्रदीप परकास, जथा एक मन्दिरविषैं ।
लहै सहज[1] अवकास, बाधा कछु उपजै नहीं ।।१२९।।

दोहा ।

त्यों हीं नभ परदेसमैं, पुद्गल बन्ध अनेक ।।
निराबाध[2] निवसैं[3] सही, ज्यों अनन्त त्यों एक ।।१३०।।
जो कर्मनकौ आगमन, आस्रव कहिये सोय ।
ताके भेद सिद्धान्तमैं, भावित[4] दरवित[5] दोय ।।१३१।।

चौपई ।

मिथ्या अविरत जोग कषाय । और प्रमादवसा दुखदाय ।।
ये सब चेतनके परिणाम । भावास्रव इनहीकौ नाम ।१३२।
तिनही भावनके अनुसार । ढिगवरती पुद्गल तिहि बार ।।
आवैं कर्म भावके जोग । सो दरवित आस्रव अमनोग[6] ।१३३।

सोरठा ।

रागादिक परिनाम, जिनसौं चेतन बँधत है ।
तिन भावनकौ नाम, भावबन्ध जिनवर कह्यौ ।।१३४।।

दोहा ।

जो चेतन परदेसपै, बैठे कर्म पुरान ।।
नये कर्म तिनसौं बन्धैं, दरवबन्ध सो जान ।।१३५।।

---

१. अनायास २. बाधा रहित ३. बसै ४. भाव ५. द्रव्य ६. असुन्दर ।

दोहा ।

जीव जथारथदिट्ठिसौं[1], सरधै तत्वसरूप ।
सो सम्यक्दरसन सही, महिमा जास अनूप ।।१४५।।
नयप्रमान निच्छेप करि, भेदाभेद विधान ।
जो तत्वनकौं जाननो, सोई सम्यकग्यान ।।१४६।।
सो सामान्य विलोकिये, दरसन कहिये जोय ।
जो विसेस कर जानिये, ग्यान कहावै सोय ।।१४७।।
चारित किरियारूप है, सो पुनि दुविध पवित्त ।
एक सकल चारित्र है, दुतिय देसचारित्त ।।१४८।।

अडिल्ल

जहाँ सकल सावद्य[2], सर्वथा परिहरै[3] ।
सो पूरन चारित्र, महा मुनिवर धरै ।।
लेश[4]-त्याग जहं होय, देशचारित वही ।
सो गृहस्थकौ धर्म, गृही[5] पालै सही ।।१४९।।

दोहा ।

तीर्थंकर निरग्रन्थपद, धर साधो सिवपंथ ।
सोई प्रभु उपदेसियो, मोखपंथ निरग्रन्थ ।।१५०।।
दसविध बाहिज[6] ग्रन्थमैं[7], राखै तिल[8]-तुस भान ।
तो मुनिपद कहिये नहीं, मुनि बिन नहिं निर्वान ।१५१।
जे जन परिग्रहवंतको, मानैं मुक्तिनिवास ।

१. यथार्थ दृष्टि से २. सदोष ३. छोड़ें ४. एक देश त्याग ५. गृहस्थ ६. बाह्य
७. परिग्रह –

वीणास ही माना जाता है । जो हो, चाहे अतीचारी
के विषयमें तत्त्वार्थसूत्रकारने उपास

ते कबहो न मुकत लहैं, भ्रमैं चतुरगतिवास ॥१५२॥
क्रोधादिक जबही करै, बंधै कर्म तब आन।
परिग्रहके संयोगसौं, बंध निरंतर जान ॥१५३॥
बंध अभावें मुक्ति है, यह जानै सब लोय।
बंध हेत बरतै जहां, मुक्ति कहांतैं होय ॥१५४॥
पच्छिम भान न ऊगवै, अगनि न सीतल होय।
जथाजात[1] जिनलिंगबिन, मोख न पावै कोय ॥१५५॥

छप्पय।

धन्य धन्य ते साधु, देह–भव–भोग विरच्चे[2]।
धन्य धन्य ते साधु, आप अपने रस रच्चे ॥
धन्य धन्य ते साधु, पीठ जगकी दिसि कीनी।
धन्य धन्य ते साधु, दिष्टि सिवसम्मुख दीनी ॥
तजि सकल आस बनवास बस, नगन देह मद[3] परिहरे ॥
ऐसे महंत मुनिराज प्रति, हाथ जोर हम सिर धरे ॥१५६॥

चौपई।

पंच महाव्रत दुद्धर धरें। सम्यक पांच समिति आदरें ॥
तीन गुपति पालैं यह कर्म। तेरहबिध चारित मुनिधर्म ॥
पालैं सधैं मुक्तिपदखेत। गिरही[4]-धर्म सुरगसुख देत ॥
सो एकादस प्रतिमारूप। ते बरनों सच्छेप सरूप ॥१५८॥
पंच उदंबर तीन मकार[5]। सात व्यसन इनको परिहार ॥

वर्णन १२ व्रतोंके सातिचार वर्णनके पश्चात् और सल्लेख
ना धारण करनेके पूर्व किया है। इस उपासकदशासत्रमें वर्णित्
शों ही श्रावकोंने बारह व्रतोंको जीवनके अधिकांश भागमें
[illegible] पूर्व ही ११ प्रतिमाओंका पालन कर सल्लेखना स्वीकार की
है। उस